अह्‌कामुल्‌ जनाइज़

लेखक

अल्लामा नासिरुद्दीन अल्‌बानी

प्रकाशक

अद्‌-दारुस्सलफिय्या

मुंबई

अह्कामुल् जनाइज़

लेखक

अ़ल्लामा नासिरूद्दीन अल्बानी

अनुवादक

खालिद हनीफ़ सिद्दीक़ी

प्रकाशक

अद्-दारुस्सलफिय्या

मुम्बई

प्रकाशित क्रमांक १३६

नाम किताब : अहकामुल जनायज़

लेखक : अ़ल्लामा नासिरूद्दीन अल्बानी

अनुवादक : ख़ालिद हनीफ़ सिद्दीक़ी

प्रथम ۲۰۰۴ء

मुद्रक : अक्रम मुख़्तार
भावे प्रा० लि०, मुम्बई

मूल्य : Rs.60/-

मिलने के पते

- दारूल मारिफ़, 13, मुहम्मद अली बिल्डिंग
  भिंडी बाज़ार, मुम्बई नं० 3
  फोन : 3716288—फैक्स 3065710

- दारूल मारिफ़, 2684 गली मस्जिद, काले ख़ां,
  कूचा चीलान, दरियागंज, नई दिल्ली-2
  फोन : 3277253, 3265058

- दारूल मारिफ
  मनसूरा, मालेगाँव, जिला नासिक

بسم الله الرحمن الرحيم

चन्द बातें इस किताब के तअ़ल्लुक़ से

(ख़ालिद हनीफ़ सिद्दीक़ी)

इस्लाम ही एक अकेला ऐसा दीन है जो मनुष्य की ज़िन्दगी के तमाम गोशों में रहनुमाई करता है, यहाँ तक कि मरने के बाद मुर्दे के कफ़न-दफ़्न के तअ़ल्लुक़ से भी क़ानून ज़ाब्ते और तौर-तरीक़े बताये हैं।

इन्सान के जिस्म से जान निकल जाने के बाद उस बेजान शव के साथ क्या व्यवहार किया जाये, उसको कैसे ठिकाने लगाया जाये? यह भी एक दीनी और इस्लामी मस्अला है, जिसका जानना हर मुसलमान के लिये ज़रूरी है। एक मुसलमान इस्लाम व ईमान पर ज़िन्दा रह कर इज़्ज़त व एहतराम के लाइक़ था, तो मरने के बाद भी वह इसी तरह इज्जत **और** एहतराम का हक़दार है।

आदमी के मर जाने के बाद उसे किस तरह नहलाया जाये, कैसे कफ़न-दफ़्न किया जाये, इन सब मसाइल को न जानने की वजह से आ़म मुसलमान ऐसे-ऐसे काम करते हैं, जिनका कुर्आन व हदीस में कहीं ज़िक्र तक नहीं है, और फिर आशचर्य यह है कि उसी बे अस्ल और बे सर-पैर के तरीक़े को अस्ल सुन्नत समझते हैं, और इन तरीक़ों को छोड़ना तो दूर की बात, उनके ख़िलाफ़ सुनना तक पसन्द नहीं करते हैं।

क़ब्रों पर चढ़ावा चढ़ाना, उनसे मुरादें माँगना, उन पर इमारत खड़ी करना, क़ब्रों को ऊँची करके पक्की बनाना, उन की तरफ़ मुँह क़रके नमाज़ पढ़ना, ख़ास दिनों में मेले की शक्ल में जमा होकर उर्स मनाना, दफ़न से फ़ारिग़ होने के बाद अज़ान देना, क़ब्र में मुर्दे के सीने के ऊपर वसिय्यत नामा लिख कर रख देना, क़ब्रस्तान में मुर्दे को सवाब पहुँचाने की ग़रज़ से अनाज फ़क़ीरों में बाँटना वग़ैरा और दीगर काम जिहालत की वजह से आम तौर पर किये जा रहे हैं।

इन हालात में बहुत ज़रूरी था कि जनाज़ा के तअ़ल्लुक़ से कुरआन और हदीस की रोशनी में एक ऐसी किताब तैयार की जाये, जो मुख़्तसर हो, लेकिन उसमें जनाज़ा के तअ़ल्लुक़ से अहम मसाइल आ जायें।

अल्लाह तआ़ला नेक बदला और लम्बी उम्र दे हज़रत अ़ल्लामा नासिरूद्दीन अल्बानी को, जिन्होंने जनाज़ा के मसाइल के तअ़ल्लुक़ से एक अहम किताब मुरत्तब करके इस कमी को पूरा कर दिया। मौसूफ़ ने अपनी इस बेनज़ीर किताब में जनाज़ा के तअ़ल्लुक़ से जितने भी मसाइल बयान किये हैं उन्हें सिर्फ़ कुरआ़न और सहीह हदीसों के हवाले से ही बयान किया है। पूरी किताब ज़ईफ़ हदीस से पाक है। जनाज़े के तअ़ल्लुक़ से यह किताब 'इन्साइक्लोपीडिया' की हैसियत रखती है। किताब का पूरा नाम "**अहकामुल जनाइज़ व बिद्अ़िहा**" है।

यह किताब चूंकि आलिमों के लिये लिखी गई है इसलिये कुरआ़न व हदीस के साथ इख़्तिलाफ़ी मसाइल का भी ज़िक्र है और दूसरे उलमा के मसलक का भी बयान शामिल है और उन पर किताब व सुन्नत की रोशनी में रद्द भी है, इसीलिये यह किताब कम पढ़े लिखे लोगों के लिये मुनासिब हाल नहीं।

बाद में मुअ़ल्लिफ़ ने ख़ुद ही इस किताब को मुख़्तसर कर दिया और इसका नाम "**मुख़्तसर अहकामुल् जनाइज़**" रखा। यह किताब कम पढ़े लिखे लोगों के लिये तरतीब दी गई है। इस मुख़्तसर किताब में जनाज़ा के तअ़ल्लुक़ से १२६ मसाइल बयान किये गये हैं और हर मस्अले के नीचे कुरआन व हदीस का हवाला दिया गया है। यह किताब कम पढ़े-लिखे लोगों के लिये ला जवाब है।

मौलाना की छोटी व बड़ी दोनों किताबें अरबी ज़ुबान में हैं, इसलिये अरबी न जानने वाले इन किताबों से फ़ाइदा नहीं उठा सकते थे, चुनान्चे पाकिस्तान के एक आलिमे-दीन मौलाना शब्बीर अहमद नूरानी ने इस किताब का सरल उर्दू में तर्जुमा कर दिया, और जहाँ-जहाँ पेचीदगियां थीं वहां हाशिये में उस मस्अ़ले की तफ़्सील बयान कर दी

हिन्दी जानने वालों की तरफ़ से बार-बार मुतालबा किया गया कि जनाज़ा के मसाइल पर हिन्दी में भी कोई किताब होनी चाहिये ताकि

उर्दू न जानने वाले उस किताब से फ़ाइदा उठा सकें। चुनान्चे एक "**नौजवान बुज़ुर्ग**" के इशारे पर और अल्लाह की तौफ़ीक़ व मर्ज़ी से इस किताब का हिन्दी एडीशन आप लोगों की सेवा में पेश कर रहा हूँ। इस हिन्दी एडीशन में मैंने यह किया है कि:

● मौलाना मौसूफ़ ने जहाँ-जहाँ इख़्तलाफ़ी, मस्लकी, मज़्हबी बहस को छेड़ा है, मैंने वहां मस्लक अहले हदीस का मस्अला लिख दिया है और इख़्तलाफ़ी बहस को एक-दम ख़त्म कर दिया है, इसलिये कि यह चीज़ें अ़वाम के फ़ाइदे के लिये नहीं हुआ करतीं हैं।

● उर्दू तर्जुमा में मुश्किल अल्फ़ाज़ को असान हिन्दी ज़ुबान में कर दिया है, जिससे कम पढ़े-लिखे लोग असानी से समझ सकें।

● उर्दू तर्जुमा में जगह-जगह कमियाँ थीं, मैंने उन्हें भी दूर करने की कोशिश की है। उम्मीद है कि हिन्दी जानने वाले इस किताब को पढ़ने के बाद अपने मुर्दों के सिलसिले में वही कुछ करेंगे जो इस किताब में मौजूद है, और आइन्दा शिर्क व कुफ़्र, बिदआ़त, जाहिलाना रस्म व रिवाज से अपने दामन को बचाते हुये इस किताब में बयान किये गये मसाइल के तअ़ल्लुक़ से अमल करेंगे।

हमने इस किताब को सक-भर बेहतर से बेहतर और आसान से आसान ज़ुबान में सेवा में पेश करने की कोशिश की है। चूंकि यह हिन्दी का पहला एडीशन है इसलिये कमियों और कोताहियों से इन्कार नहीं किया जा सकता, पढ़ने वालों को जहां कोई कमी नज़र आये उससे अवगत करायें ताकि दूसरे ऐडीशन में उस कमी को दूर किया जा सके।

इन् उरीदु इल्लल् इस्लाहु मस्-त-तअ्तु वमा तौफ़ीक़ी इल्ला बिल्लाहि अ़लैहि त-वक्कलतु व इलैहि उनीब

ख़ादिम

ख़ालिद हनीफ़ सिद्दीक़ी

विषय सूची

क्या? **कहाँ?**

بسم الله الرحمن الرحيم

मरीज़ के फ़राइज़

१ मरीज़ के लिए ज़रूरी है कि वह अल्लाह के फ़ैसले पर राज़ी रहे, तक़दीर पर सब्र करे, अपने पर्वर दिगार के बारे में अच्छा ख़्याल रखे। यह बातें उसके हक़ में बहुत ही मुफ़ीद हैं। रसूलुल्लाह सल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का इर्शाद है:

"मोमिन का मुआमला भी ख़ूब है। उसका हर हाल अच्छा ही होता है, और यह बात मोमिन के अलावा किसी को नसीब नहीं। अगर खुशी मिले तो शुक्र अदा करने वाला होता है, और यह उसके लिये बेहतर है, और अगर तकलीफ़ पहुंचे तो सब्र करता है और यह भी उसके लिए बेहतर है।" (मुस्लिम शरीफ़)

आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने यह भी इर्शाद फ़रमाया :

"तुम में से जो इस दुनिया से जा रहा हो, उसे अपने रब के बारे में हुस्ने ज़न (अच्छा ख़्याल) रखना चाहिए।" (मुस्लिम शरीफ़)

२ मरीज़ के लिए मुनासिब है कि डर और उम्मीद के बीच की हालत में रहे, अपने गुनाहों पर अल्लाह की सज़ा से डरता हो और उसकी रहमत का उम्मीदवार भी हो। हज़रत अनस बिन [illegible] रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम एक नौजवान के पास तशरीफ़ लाये इस हालत में कि वह मौत और ज़िन्दगी के दर्मियान जूझ रहा था (मरने के क़रीब था) आप ने उससे पूछा कि क्या हाल हैं ? उसने कहा! अल्लाह की क़सम ऐ अल्लाह के रसूल

सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम, मैं अल्लाह से रहमत की उम्मीद रखता हूँ और गुनाहों से भी डरता हूँ। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

"ऐसे वक़्त किसी बन्दा के दिल में जब ये चीज़ें पैदा हो जायें तो अल्लाह तआ़ला उसे उसकी उम्मीद के मुताबिक़ दे देता है, और जिस बात का उसे रन्ज हो उससे बचा लेता है।" (तिर्मिज़ी शरीफ़)

३ मरीज़ को मौत की तमन्ना हर्गिज़ नहीं करनी चाहिए, चाहे बीमारी कितनी ही सख़्त क्यों न हो! अगर ज़रूर ही कहना चाहे तो यूँ कहे:

"ऐ अल्लाह! जब तक ज़िन्दगी बेहतर है, मुझे ज़िन्दा रख और जब मौत बेहतर हो, तो मौत दे दे।"

(बुख़ारी, मुस्लिम)

४ अगर मरीज़ के ज़िम्मा लोगों का लेन-देन हैं, तो जहां तक हो सके उन्हें अदा कर दे, वर्ना वसिय्यत कर जाये, इसलिए कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इस बात का सख़्ती से हुक्म दिया है। (बुख़ारी, मुस्लिम)

५ लेन-देन के तअ़ल्लुक़ से वसिय्यत जल्दी करनी चाहिये। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का इर्शाद है:

"किसी मुसलमान के लिये यह मुनासिब नहीं कि वह दो रातें भी इस हाल में गुज़ार दे जब कि किसी चीज़ के बारे में वसिय्यत भी करना चाहता हो मगर उसकी वसिय्यत लिखित रूप में उसके पास मौजूद न हो।"

(मुत्तफ़क़ अ़लैह)

हज़रत उमर रज़ि० कहते हैं कि जबसे मैंने अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का यह हुक्म सुना है, मुझ पर एक रात भी ऐसी नहीं गुज़री कि वसिय्यत लिखित रूप में मेरे पास न हो (बुख़ारी, मुस्लिम)

❻ मरीज़ के लिए यह भी ज़रूरी है कि ग़ैर वारिस रिश्तेदारों के लिये भी वसिय्यत करे। अल्लाह तआ़ला का हुक्म है:

> *"तुम पर फर्ज़ किया गया है कि जब तुम में से किसी की मौत का वक़्त आये और वह अपने पीछे माल छोड़ रहा हो, तो वालिदैन (माँ-बाप) और रिश्तेदारों के लिये अच्छे और भले तरीक़े से वसिय्यत करे, यह मुत्तक़ी (प्रहेज़ गार) लोगों पर हक़ है।"*
>
> *(सूर: बक़र अय: १८०)*

❼ मरीज़ को अपने माल में से एक तिहाई (१/३) की वसिय्यत का हक़ है, इससे ज़्यादा जायज़ नहीं। हां, इससे कम अफ़्ज़ल है। हज़रत सअ़द् बिन अबी वक़्क़ास रज़ि० रिवायत करते हैं कि हज्जतुल विदा (आख़िरी हज) के वक़्त मैं रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के साथ था कि मैं अचानक सख़्त बीमार हो गया और मौत के बिल्कुल क़रीब पहुँच गया था, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने मेरी अ़यादत फ़रमाई, मैंने आपसे कहा कि मेरे पास काफ़ी कुछ माल है और केवल एक बेटी ही वारिस है, तो क्या मैं दो तिहाई (२/३) माल की वसिय्यत कर दूँ। आप ने फ़रमाया नहीं, मैंने कहा आधे (१/२) माल की? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने कहा नहीं। मैंने दरख़्वास्त की तिहाई (१/३) माल की, तो आप स० ने फ़रमाया: हां, तिहाई माल (की वसिय्यत कर सकते हो) और यह भी बहुत है। ऐ सअ़द तुम अपने वारिसों को अच्छे हाल में रहने दो, यह तुम्हारे लिये बेहतर है कि तुम उनको तंगदस्ती (बदहाली) में छोड़ो और वह लोगों के सामने हाथ फैलाते रहें। ऐ सअ़द! अल्लाह को ख़ुश रखने के लिये तुम जो भी ख़र्च करोगे, तुम्हें उसका अच्छा बदला मिलेगा।

यहां तक कि जो निवाला तुम अपनी बीवी के मुहँ में दो (उस पर भी सवाब मिलेगा) हज़रत सअ़द् रज़ि० कहते हैं कि आख़िर एक तिहाई (माल की वसिय्यत) जायज़ ठहरी। (बुख़ारी, मुस्लिम)

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ि० फ़रमाते हैं:

> *"मुझे पसन्द यह है कि लोग तिहाई के बजाये चौथाई की वसिय्यत किया करें, क्योंकि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने तिहाई को ज़्यादा बताया है।" (बुख़ारी, मुस्लिम)*

८ मरीज़ जो वसिय्यत करे उस पर दो सच्चे मुसलमानों की गवाही हो। अगर दो मुसलमान न मिलें, तो दो ग़ैर मुस्लिम ही सही, मगर इस शर्त पर कि उनकी गवाही शक के मौक़े पर मानने के क़ाबिल हो जैसा कि अल्लाह तआ़ला ने "सूर: माइदा" में इसकी तफ़्सील बयान फ़रमाई है:

> *"ऐ ईमान वालो! तुम्हारे आपस में दो आदमियों का वसी होना मुनासिब है जब कि तुम में से किसी को मौत आने लगे जब वसिय्यत करने का वक़्त हो। वह दो आदमी ऐसे हों कि दीन दार हों और तुम में से हों या ग़ैर क़ौम में से हों, या अगर तुम सफ़र में हो और वहां मौत की मुसीबत आ जाये तो ग़ैर लोगों ही में से दो गवाह ले लिये जायें, फिर अगर कोई शक पड़ जाये तो नमाज़ के बाद दोनों गवाहों को (मस्जिद में) रोक लिया जाये और वह अल्लाह की क़सम खाकर कहें कि हम किसी ज़ाती फ़ायदे के लिये गवाही को बेचने वाले नहीं हैं, अगर्चे कोई हमारा रिश्तेदार ही क्यों न हो (हम उसकी तरफ़-दारी करने वाले नहीं) और न हम अल्लाह के वास्ते की गवाही को बचाने*

वाले हैं, अगर पता चल जाये कि उन दोनों ने अपने आप को गुनाह में मुबतिला किया है तो फिर उनके मुक़ाबले में गवाही देने के लिये जो अहल-तर हों, उन लोगों में से खड़े हों जिन की हक़-तल्फ़ी हुई हो और वे अल्लाह की क़स्म खाकर कहें कि हमारी गवाही में कोई कमी-बेशी नहीं की है, अगर ऐसा करें तो ज़ालिमों में से होंगे। इस तरह से उम्मीद की जा सकती है कि लोग ठीक-ठीक गवाही देंगे, या कम से कम इस बात से डरेंगे कि उनकी क़स्मों के बाद दूसरी क़स्मों से कहीं उनकी तरदीद न हो जाये। अल्लाह से डरो और सुनो, अल्लाह ना-फ़र्मानी करने वालों को अपनी हिदायत से महरूम कर देता है।

(सूर: माइदा, आय: १०६,१०७,१०८)

९ माँ-बाप और क़रीबी रिश्तेदार (जो मीरास के हक़-दार हैं) के लिये वसिय्यत करना जायज़ नहीं, इसलिये कि मीरास की आय: से उनका हुक्म अलग हो चुका है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने अपने आख़िरी हज के मौक़े पर यह बात बहुत वज़ाहत के साथ बयान फ़रमा दी थी। आपने फ़रमाया :

अल्लाह ने हर हक़-दार को उसका हक़ दे दिया है इसके लिये किसी वारिस के लिये वसिय्यत जायज़ नहीं (अबू दावूद, तिर्मिज़ी)

१० वसिय्यत करने में किसी पर ज़्यादती हराम है, यानी यह कि किसी वारिस को उसके हक़ से कम और किसी को उसके हक़ से ज़्यादा की वसिय्यत कर दे। अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है :

"मर्दों के लिये उस माल में हिस्सा है, जो माँ-बाप और क़रीब के रिश्तेदारों ने छोड़ा हो, और औरतों के लिये भी उस माल में हिस्सा है जो माँ-बाप और

क़रीबी रिश्तेदारों ने छोड़ा हो, चाहे थोड़ा हो या बहुत, और यह हिस्सा (अल्लाह की तरफ़ से) तै है"

(सूरः निसा, आयः ७)

एक दूसरी जगह अल्लाह ने हुक्म फ़रमाया है:

"जब कि वसिय्यत जो की गई हो पूरी कर दी जाये और क़र्ज़ जो मय्यित ने छोड़ा हो अदा कर दिया जाये इस शर्त पर कि उससे किसी को नुक़सान न हो, यह हुक्म है अल्लाह की तरफ़ से, और अल्लाह तआला जानने वाला और बुर्द-बार है।" (सूरः निसा, आयः १२)

वसिय्यत के तअल्लुक़ मे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का इर्शाद है:

"न नुक़सान देना है और न नुक़सान सहना है। जिसने किसी को नुक़सान पहुंचाया तो अल्लाह तआला उसका नुक़सान करेगा। जिसने किसी को परेशान किया, तो उसको अल्लाह परेशान करेगा।" (मुस्तदरक हाकिम)

११ ऐसी वसिय्यत जिसमे किसी को तो फ़ाइदा और किसी को नुक़सान हो, नाजाइज़ और हराम है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इस तअल्लुक़ मे इर्शाद फ़रमाया:

"जिसने हमारे इस दीनी मुआमले में नई चीज़ पैदा की जो उसमें से नहीं, तो वह अ़मल करने के क़ाबिल नहीं" (बुख़ारी, मुस्लिम)

१२ इस ज़माने में आ़म जनता बिद्अतों में फँसी है और ख़ास कर जनाज़े के मुआमले में। एक मुसलमान के लिये ज़रूरी है कि वह वसिय्यत भी कर दे कि उसका कफ़न-दफ़न सुन्नत के मुताबिक़ हो। अल्लाह तआला ने फ़रमाया है :

"ऐ ईमान वालो, अपने आप को और अपने बाल बच्चों को उस आग से बचाओ, जिसका ईंधन इन्सान और

पत्थर होंगे, जिसपर निहायत ही सख़्त मिज़ाज और सख़्त पकड़ वाले फ़रिशते डियूटी पर होंगे, जो कभी भी अल्लाह के हुक्म की नाफ़र्मानी नहीं करते, और जो हुक्म उन्हें दिया जाता है उसे बजा लाते हैं।"

(सूर: तहरीम, आय: ६)

इसीलिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के सहाबा इस दुनिया से इसी बात की वसिय्यत कर के गये थे। सहाबा के ताल्लुक़ से बहुत सारी रिवायतें मौजूद हैं, जिनको हमने अपनी दूसरी किताबों में बयान कर दिया है, वहां देखा जा सकता है। हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ि० का क़ौल है:

"जब मैं मर जाऊँ तो किसी को न बताना, इसलिये कि हो सकता है इस एलान को "नअ़्इ" में शुमार किया जाये, इसलिये कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इससे (नअ़ई) मना फ़रमाया है और यह बात मैंने अपने कानों से सुनी है।" (तिर्मिज़ी)

इसीलिये इमाम नववी रह० ने अपनी किताब "अल्-अज़्कार" में लिखा है कि:

"मरने वाले के हक़ में यह बहुत अच्छा है कि वह अपने रिश्तेदरों को जनाज़े के तअल्लुक़ मे होने वाली बिद्अ़तों से मना कर जाये और यह बात ज़ोर देकर कहे।" (अल्-अज़्कार-१२१)

मरने वाले को तल्क़ीन करना

१३ जब कोई मरने लगे तो जो भी कोई उसके पास हो उसे निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिये।

क) उसे कलिमा-ए-तौहीद की तल्क़ीन करें। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

"अपने मरने वालों को "ला इला-ह इल्-लल् लाह" की तलक़ीन किया करो, (मुस्लिम)
"जिसने मरते वक़्त यह कलिमा कहा, वह आख़िर जन्नत में जायेगा चाहे इससे पहले कितनी ही सज़ा मिले।" (इब्ने हिब्बान)

ख) उस के पास सिर्फ़ अच्छी बातें ही करें। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

"जब तुम किसी बीमार या मरने वाले के पास हो तो केवल अच्छी बातें ही कहो, क्योंकि फ़रिश्ते भी तुम्हारी बात पर आमीन कहते हैं।" (मुस्लिम)

१४ "तल्क़ीन" से मुराद कलिमा-ए-तौहीद पढ़कर उसे सिर्फ़ सुनाना ही नहीं, बल्कि उससे कहा जाये कि वह भी पढ़े। (हालांकि कुछ उलमा की राय इसके ख़िलाफ़ है) हमारी राय की दलील हज़रत अनस रज़ि० की हदीस है, कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम एक अन्सारी की अ़यादत को तशरीफ़ लाये तो फ़रमाया:

"मांमू जान! "लाइलाह इल्लल्लाह" कहिये, उन्होंने पूछा कि माँमू या चचा? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया कि मांमू, उन्होंने पूछा कि

लाइलाह इल्लल्लाह कहना मेरे हक़ में बेहतर है? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया, हाँ"

(मुस्नद इमाम अहमद)

१५ मरने वाले के पास सूरः यासीन पढ़ने और उसका मुंह क़िब्ले की तरफ़ करने के बारे में कोई हदीस नहीं है। हज़रत सईद बिन मुसय्यिब (ताबई) ने तो (मुंह क़िब्ला की तरफ़ करने को) ना-पसन्द करते हुये कहा है:

"क्या मरने वाला मुसलमान नहीं है?"

हज़रत ज़रआ़ बिन अब्दुर्रहमान रह० बयान करते हैं कि मैं सईद बिन मुसय्यिब रह० के जाँकनी के वक़्त मौजूद था, अचानक उन पर बेहोशी छा गई। हज़रत अबू सलमा के कहने पर आपका बिसतर क़िब्ला रूख़ कर दिया गया, जब वह (सईद) कुछ होश में आये तो पूछा कि आप लोगों ने मेरा बिस्तर फेरा है? तो कहा गया कि हाँ, इस पर सईद बिन मुसय्यिब रह० ने अबू सलमा की तरफ़ देखकर कहा:

"मेरा ख़्याल है कि तुमने ऐसा करवाया है? अबू सलमा ने कहा, हाँ मैंने ही कहा था"

हज़रत सईद ने कहा:

"मेरा बिस्तर पहले की तरह कर दिया जाये"

(मुसन्निफ़ इब्ने अबी शैबा)

१६ किसी काफ़िर के मरने के वक़्त मुसलमान के लिये उसके पास जाने में कोई हरज नहीं ताकि उसे इस्लाम की दावत दे, शायद वह मुसलमान हो जाये। हज़रत अनस रज़ि० बयान करते हैं:

"एक यहूदी बच्चा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की सेवा किया करता था, वह बीमार हो गया तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम उसे देखने गये और उसके सर के क़रीब बैठ कर फ़रमाया: "इस्लाम ले आओ" उस बच्चे ने अपने पास बैठे हुये बाप की

तरफ़ देखा, तो आप ने कहा कि अबुल् क़ासिम (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) की बात मान लो, चुनाँचे उसने कलिमा पढ़ लिया, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम यह कहते हुये उसके पास से उठे "अल्लाह का शुक्र है जिसने उसे आग से बचा दिया।" (बुख़ारी शरीफ़) और जब वह मर गया, तो आपने उसकी जनाज़ा की नमाज़ पढ़ने का हुक्म दिया।

(मुसनद् अहमद)

वफ़ात के बाद मौजूद लोगों की जिम्मेदारियाँ

१७ जब बीमार मर जाये, तो उसकी आँखें बन्द कर दें और उसके लिये दुआ करें।

हज़रत उम्मे सलमा रज़ि० बयान करती हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम अबू सलमा को देखने गये, तो उनकी आँखें खुली हुई थीं, आप ने उनको बन्द फ़रमा कर कहा कि जब जान निकलती है, तो आँख उसका पीछा करती है। चुनान्चे घर वाले वावेला करने लगे तो सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया: अपने लिये अच्छी दुआ करो, फ़रिशते भी तुम्हारी दुआ पर आमीन कहते हैं, फिर आपने दुआ फ़रमाई:

> *"ऐ अल्लाह! अबू सलमा को बख़्श दे, आख़िरत में उनके दर्जे को बुलन्द फ़र्मा, उनके बच्चों का वाली बन जा। ऐ अल्लाह! हमें और उन्हें बख़्श दे, उनकी क़ब्र को कुशादा कर के नूर से भर दे"* (मुस्लिम शरीफ़)

★ उसके तमाम बदन को कपड़े से ढाँप दें! हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि० बयान फ़रमाती हैं:

> *"जब आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की रूह निकल गई तो आपको धारीदार चादर से ढाँप दिया गया"*
>
> *(बुख़ारी, मुस्लिम)*

★ ऊपर ढाँपने का हुक्म ग़ैर मुह्‌रिम (जिसने हज व उम्रा की ग़रज़ से एहराम न बाँधा हो) के लिये है, अल्बत्ता मुहरिम (जिसने हज या उम्रा की ग़रज़ से एहराम बाँधा हो) का मुँह और सर नहीं छुपाया

जायेगा। हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० बयान फरमाते हैं:

"एक आदमी अरफ़ात के मैदान में था कि अचानक सवारी से गिर गया और ऊंटनी ने उसकी गरदन तोड़ दी (या रिवायत करने वाले ने कहा कि उसने वहीं मार दिया) तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि उसे पानी और बैरी के पत्तों से नहला कर दो कपड़ों में कफ़न दो एक दूसरी रिवायत में है कि उसीके दोनों कपड़ों में कफ़न दो) खुश्बू न लगाओ और न ही उसका सर और मुँह छुपाओ, यह क्यामत के दिन तलबिया (लब्बैक अल्लाहुम्म लब्बैक ला शरीक लक............) कहते हुये उठेगा।" (मुस्लिम शरीफ़)

★ जब मौत हो जाये तो कफ़न दफ़न के बारे में जल्दी की जाये। हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

"जनाज़े के बारे में जल्दी किया करो"

(बुखारी, मुस्लिम)

जिस इलाके में मरा हो वहीं दफ़न करना चाहिये, किसी दूसरी जगह न ले जाया जाये, क्योंकि इधर से उधर लाने ले जाने में देरी हो जायेगी, और यह काम रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के ऊपर बयान किये गये हुक्म के ख़िलाफ़ भी है, जैसा कि हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० की ऊपर की रिवायत से साबित है। हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि० के भाई (अब्दुर्रहमान) जब हब्शा की वादी में फ़ौत हो गये और उनको वहाँ से (मदीना) लाया गया तो बड़े अफ्सोस से फ़रमाया:

"मुझे इस बात का रन्ज है कि जहाँ वफ़ात हुई वहीं क्यों न दफ़्न कर दिये गये।" (बैहक़ी)

★ इमाम नववी रह० ने "अल्-अज़्कार" में लिखा है कि अगर मरने वाला अपनी लाश यहाँ से वहाँ लेजाने की वसिय्यत भी कर जाये, तो भी उस पर अ़मल न किया जाये, क्योंकि सहीह और दुरूस्त मस्लक के मुताबिक़ लाश को इधर से उधर ले जाना हराम है। अक्सर उलमा का यही कहना है और तहक़ीक़ करने वालों का भी यही फ़त्वा है।

(अल्-अज़्कार,पृ०१५०)

★ मरने वाले का क़र्ज़ उसके माल से फ़ौरन अदा कर दिया जाये, चाहे सारा माल ख़त्म हो जाये, और अगर उसने माल न छोड़ा हो तो हुकूमत उसका क़र्ज़ अदा करे, इस शर्त पर कि उसने भर-सक क़र्ज़ अदा करने की कोशिश की हो। और अगर हुकूमत न अदा करे तो जो मुसलमान भी उस मरने वाले पर एहसान करते हुये उसका क़र्ज़ अदा कर देगा, सहीह होगा। इस बारे में बहुत सी हदीसें मौजूद हैं।

(दिखें हमारी अस्ल किताब पृष्ठ १४, १५, १६)

मौक़े पर मौजूद लोगों और दूसरों के लिये जायज़ काम

१८ मुर्दा के चेहरे से कपड़ा उठा कर उसकी आँखों के बीच बोसा दिया जा सकता है, जैसा कि हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ि० ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की वफ़ात के बाद आप को बोसा दिया। और तीन दिन तक रोने की भी इजाज़त है। हज़रत आइशा सिद्दिक़ा रज़ि० बयान फ़रमाती हैं:

"हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ि० अपनी रेहाइश गाह "अस्सुन्ह" (एक जगह का नाम) से घोड़े पर तशरीफ़ लाये और उतर कर मस्जिद में आये (जबकि हज़रत उमर रज़ि० लोगों में तक़रीर कर रहे थे) आपने हज़रत आइशा के पास आने तक किसी से बात न की और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के पास पहुँचे, उस वक़्त आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम धारीदार चादर से ढाँपे हुये थे, हज़रत अबू बक्र ने चेहरे से कपड़ा उठाया और झुक कर आँखों के दर्मियान बोसा देकर रो पड़े और फ़रमाया: "ऐ अल्लाह के नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम, आप पर मेरे माँ-बाप क़ुर्बान, अल्लाह तआ़ला आप को दो बार मौत नहीं देगा, जो मौत आनी थी वह आ चुकी है।"

(बुख़ारी शरीफ़)

हज़रत अनस बिन मालिक रज़ि० बयान करते हैं:

"हम रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के साथ अबू सैफ़ के पास आये। अबू सैफ़ ने इब्राहीम को गोद में लेकर बोसा दिया और प्यार किया, बाद में हम दो-बारा गये तो इब्राहीम की आख़िरी सांस चल रही थी, यह देखकर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के आंसू बहने लगे। हज़रत अब्दुर्रहमान बिन औफ़ रज़ि० ने पूछा कि अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम! क्या आप भी रोते हैं? आप ने फ़रमाया: "ऐ इब्ने औफ़! यह तो मुहब्बत व शफ़्क़त है"। फिर बात को आगे बढ़ाते हुये फ़रमाया: "आँखों से आंसू बहते हैं, दिल ग़म से निढाल होता है, लेकिन हम सिर्फ़ वह बात कहते हैं, जिससे हमारा रब राज़ी रहे। ऐ इब्राहीम! तेरी जुदाई से हम ग़मगीन हैं।"

(बुख़ारी, मुस्लिम)

हज़रत अब्दुल्लाह बिन जाफ़र से रिवायत है कि:

"रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने तीन दिन तक जाफ़र की आल व औलाद को मौक़ा दिया कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम उनके पास आयेंगे, फिर तीन दिन बाद आकर फ़रमाया: "आज के बाद मेरे भाई को न रोना।" (अबू दावूद, नसई)

नोट : पूरी हदीस मस्अला न. १११ में देखें

क़रीब के रिश्ते-दारों की जिम्मे-दारियाँ

१६ मरने वाले के क़रीबी रिश्तेदारों को जब मरने की ख़बर मिले तो दो बातों पर ज़रूर अमल करें

क) तक़्दीर पर सब्र व शुक्र करें। इसलिये कि अल्लाह तआ़ला का हुक्म है:

"और हम ज़रूर तुम्हें ख़ौफ़ व डर, भूख व प्यास, जान व माल के नुक़्सान व आमदनी के घाटे में डालकर तुम्हारी आज़माइश करेंगे। इन हालात में जो लोग सब्र करें और जब कोई मुसीबत पड़े तो कहें कि "हम अल्लाह ही के हैं, और अल्लाह ही की तरफ़ हमें पलट कर जाना है," उन्हें ख़ुश ख़बरी दे दो, उन पर उनके रब की तरफ़ से बड़ी मेहरबानियां होंगी, उसकी रहमत उन पर साया करेगी और ऐसे ही लोग हिदायत पाने वाले हैं।" *(सूरः बक़रः)*

हज़रत अनस बिन मालिक रज़ि० बयान फ़रमाते हैं:

"अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम एक औरत के पास से गुज़रे, जो क़ब्र पर बैठी रो रही थी, आप ने फ़रमाया: "अल्लाह से डरो और सब्र करो" उसने कहा कि "दूर रहो, तुम्हें मेरी परेशानी का क्या पता।"

हज़रत अनस रज़ि० फ़रमाते हैं: उस औरत ने आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम को पहचाना नहीं, जब उसे बताया गया कि वह तो रसूलुल्लाह

सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम थे, तो बहुत घबराई, और आपके दरवाज़े पर आई जहाँ कोई चौकीदार तक न था, चुनान्चे उसने हाज़िर होकर अ़र्ज़ किया कि मैंने आप को पहचाना नहीं था, तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़रमाया:

"बेशक़, सब्र पहले रन्ज व ग़म के वक़्त ही होता है।"

(बुख़ारी, मुस्लिम)

★ औलाद की मौत पर सब्र करना बड़े अज्र व सवाब का बाइस है, इस बारे में बहुत सारी हदीसें हैं, कुछ हदीसें यहाँ बयान की जाती हैं।

"जिन वालिदैन के तीन ना-बालिग़ बच्चे फ़ौत हो जायें, अल्लाह तआ़ला उन्हें उनके माँ-बाप के साथ अपने फ़ज़्ल से जन्नत में दाख़िल करेगा, वह बच्चे जन्नत के दरवाज़े पर होंगे, जब उनसे कहा जायेगा कि जन्नत में चले आओ तो वह कहेंगे कि माँ-बाप के आने पर हम जन्नत में जायेंगे, उनसे दोबारा कहा जायेगा कि अल्लाह के फ़ज़्ल से तुम अपने माँ-बाप के साथ जन्नत में दाख़िल हो जाओ।" (नसई)

★ *"जिस औरत के तीन बच्चे फ़ौत हो गये वह आग से रूकावट बन जायेंगे, एक औरत ने पूछा कि दो के बारे में क्या हुक्म है? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया : दो भी।" (बुख़ारी शरीफ़)*

ब) मरने वाले के क़रीबी रिश्तेदार **'इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन्** पढ़ें, और यह दुआ पढें:

"अल्ला हुम्-म अजिर्नी फ़ी मुसी-बती वख़्लुफ़ ली ख़ैरम्-मिन्हा"

ऐ अल्लाह! मेरी मुसीबत पर मुझे सवाब अ़ता फ़रमा और मुझे उसका अच्छा बदला अता कर" (मुस्लिम शरीफ़)

२० औरत अगर अपने रन्ज व ग़म और अफ़्सोस को ज़ाहिर करते हुये बनाव-सिंघार नहीं करती है, तो इसमें कोई हरज की बात नहीं। अपने बच्चे या रिश्ते-दार के लिये तीन दिन का सोग मना सकती है, अल्बत्ता अपने शौहर की मौत पर चार महीना दस दिन तक सोग मनाये। इस मस्अले के तअ़ल्लुक़ से हज़रत ज़ैनब बिन्त अबू सलमा रज़ि० बयान करती हैं कि मैं उम्मि हबीबा रज़ि० की ख़िदमत में हाज़िर हुई तो उन्होंने मुझ से बताया कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम को फ़रमाते हुये सुना है:

> *"जो औरत अल्लाह और आख़िरत पर ईमान रखती हो वह किसी मरने वाले का तीन रोज़ से ज़्यादा सोग न मनाये, हाँ अपने शौहर की मौत पर चार महीना दस दिन तक सोग मनाये।"* *(बुख़ारी शरीफ़)*

हज़रत ज़ैनब बिन्त अबू सलमा आगे बयान करती हैं कि मैं फिर हज़रत ज़ैनब बिन्ते जहश के पास आई, उन्हीं दिनों उनके भाई का इन्तक़ाल हुआ था, तो उन्होंने ख़ुश्बू मंगवा कर लगाई फिर कहा: कि मुझे ख़ुश्बू की ज़रूरत तो नहीं थी लेकिन मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम को बयान फ़रमाते हुये सुना:

> *"जो औरत अल्लाह और आख़िरत पर ईमान रखती हो वह किसी मरने वाले का तीन रोज़ से ज़्यादा सोग न मनाये, अपने शौहर के मरने पर चार माह दस दिन तक सेग मनाये।"* *(बुख़ारी शरीफ़)*

२१ औरत अगर अपने शौहर की रज़ा-मन्दी और ख़्वाहिश की ख़ातिर (शौहर के अलावा) किसी दूसरे का सोग न मनाये, तो यह बहुत बेहतर है, तनीजा के तौर पर उसके लिये बहुत भलाई की उम्मीद की जा सकती है, जैसा कि उम्मे सुलैम और अबू तल्हा अन्सारी रज़ि० के साथ पेश आया (इनको मालूम करने के लिये हदीस की किताबें देखें)

रिश्ते-दारों के लिये जो काम मना हैं

२२ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने मुर्दे के तअल्लुक़ से कई काम हराम ठहराये हैं, लेकिन ज़्यादा-तर लोग उन कामों के करने से बाज़ नहीं आते, हालांकि उनसे बचना इन्तहाई ज़रूरी है। इन कामों से बचने की रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने सख़्त ताकीद फ़रमाई है:

★ ***नौहा व मातम करना:*** *इस के बारे में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने हुक्म फ़रमाया: "लोगों में दो कुफ़्र की बातें पाई जाती हैं, नसब का ताना देना और मरने वाले पर नौहा व मातम करना" (मुस्लिम शरीफ़)*

★ **मुहं पीटना, गरीबान फाड़ना:** *इनके बारे में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने हुक्म फ़रमाया: "जिसने मुहं पीटा और गरीबान फाड़ा या जाहिलिय्यत की बातें कीं, उसका मुझ से कोई तअ़ल्लुक़ नहीं।" (बुख़ारी, मुस्लिम)*

★ ***बाल मुंडवाना*** *(रन्ज व ग़म को ज़ाहिर करने के लिये)*

हज़रत अबू बुर्दा बिन हज़रत अबू मूसा रज़ि० रिवायत करते हैं कि अबू मूसा को सख़्त बीमारी के बाद बेहोशी छा गई, उस वक़्त उनका

सर अपनी बीवी की गोद में था, इतने में एक रिश्ते-दार औरत रोने चिल्लाने लगी, हज़रत अबू मूसा उसे मना न कर सके, लेकिन जब ज़रा तबियत संभली तो फ़रमाया:

मैं उन लोगों से बेज़ार हूँ जिनसे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम बेज़ार थे, क्योंकि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने ज़ोर-ज़ोर से चीख़ने वाली, या सर मुंडाने और कपड़े फाड़ने वाली से बेज़ार थे।" (बुख़ारी)

★ **मरने वाले के ग़म में बालों को बेतुके पन के साथ बिखरा हुआ रखना:** एक साहाबिया औरत जिन्होंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के हाथ पर बैअ़त् की थी, रिवायत करते हुये बयान करती हैं:

"रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने जिन नेक कामों का हम से वाइदा किया उनमें यह भी शामिल था कि हम आप की नाफ़र्मानी न करेंगी, मुंह नहीं नोचेंगी, वावेला नहीं करेंगी, कपड़े नहीं फाड़ेंगी और बालों को बिखरा हुआ नहीं रखेंगी।"

(अबू-दावूद शरीफ़)

★ **मरने वाले के रन्ज व ग़म में दाढ़ी न मूंडना और वह दिन बीत जाने के बाद दोबारा दाढ़ी मूंड लेना** : यह काम भी ऊपर वाले हुक्म में शामिल है, और यह बिद्अत व गुमराही है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

"दीन में दाख़िल की गई हर नई चीज़ गुमराही है और गुमराही आग में ले जाने वाली है।" (नसई)

★ **मशहूर करने के लिये किसी की मौत का ऐलान अहम –अहम जगहों पर करना:** यह सब काम का शुमार "नअ़्यी" में होता है। (पहले यह रिवाज था कोई मर जाता था तो

कुछ लोगों की यह ड्यूटी लगा दी जाती थी कि वह बाज़ारों, गली कूचों में रो-रो कर उसके मरने का ऐलान करें, इसी को "नअ्यी" कहा जाता है।) हज़रत हुज़ैफ़ा बिन यामान रज़ि० के बारे में साबित है वह कहते हैं:

> *"जब कोई मर जाता तो कहते थे कि किसी को न बताना, इसलिये कि मुझे डर है कि यह ऐलान "नअ़यि" में न शुमार हो, क्योंकि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम से सुना है कि आप "नअ़यि" से मना फ़रमाते थे।" (तिर्मिज़ी)*

मौत की ख़बर देने का जायज़ तरीक़ा

२३ किसी के मरने की ख़बर देना जायज़ है, लेकिन शर्त यह है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के बताये हुये तरीक़े के ख़िलाफ़ न हो। और अगर मरने वाले को नह्लाना, कफ़न-दफ़न देना, जनाज़ा की नमाज़ पढ़ने वाला कोई न हो तो ख़बर देना वाजिब और ज़रूरी है। हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० रिवायत करते हुये बयान फ़रमाते हैं:

> *"जिस दिन नज़ाशी (हब्शा का बादशाह) का इन्तिक़ाल हुआ उसी दिन रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने उनके मरने की ख़बर मुसलमानों को दी"* *(बुख़ारी, मुस्लिम)*

२४ बेहतर यह है कि मौत की ख़बर करने वाला लोगों से दरख़्वास्त करे कि मरने वाले के हक़ में दुआ़ करें, जैसा कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने नजााशी के मरने की ख़बर देने के बाद यह भी फ़रमाया:

> *"अपने भाई (नज़ाशी) के लिये इस्तिग़फ़ार करो।"*
>
> *(मुस्नद अहमद)*

इस ज़माना में कुछ लोग कहते हैं कि फलाँ मरने वाले को सवाब पहुँचाने के लिये फ़ातिहा पढ़ो, यह कहना सुन्नते रसूल (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) के ख़ेलाफ़ है और यह बिद्अ़त है, क्योंकि किसी की तिलावत से मरने वाले को कोई फ़ाइदा नहीं होता। (इस मस्अले की तफ़्सील इस किताब के मस्अला न० १२० में देखें।)

अच्छी मौत की निशानी

२५ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने अच्छे और बेहतर की मौत की चन्द निशानियां साफ़ तौर पर बता दीं हैं। अल्लाह तआ़ला अपने फ़ज़्ल व करम से हम सबको भी नसीब करे। अगर मरने वाले में इन निशानियों में से कोई भी निशानी पाई जाये, तो वह खुश-ख़बरी से कम नहीं।

१.) आख़िरी साँसों के साथ ही कलिमा–ए–तौहीद की अदायगी: इस तअ़ल्लुक़ से बहुत सारी हदीसें अस्ल किताब में मौजूद हैं। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का इर्शाद है:

> *"जिस ने आख़िरी बात "लाइलाह इल्लल् लाह" कही, वह जन्नत में दाख़िल हो गया।" (मुस्तद रक हाकिम)*

२.) मौत के वक़्त माथे पर पसीना आना: हज़रत बुरैदा बिन ख़सीब बयान करते हैं:

> *"मैं ख़ुरासान में था और अपने भाई की अ़यादत को गया, वह मौत व हयात के बीच में थे, देखा तो उनकी पेशानी पसीने में डूबी हुई थी, मैंने कहा "अल्लाहु-अक्बर" रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम को मैंनें फ़रमाते हुये सुना है कि मोमिन की मौत के वक़्त पेशानी पर पसीना होता है। (मुसनद अहमद, नसई)*

३.) जुमा की रात या जुमा के दिन मौत आना: रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का इर्शाद है:

> *"जो मुसलमान जुमा के दिन, या जुमा की रात को वफ़ात पाये, अल्लाह तआ़ला उसे क़ब्र की आज़माइश से महफ़ूज़ कर देता है।" (तिर्मिज़ी)*

४.) जिहाद के मैदान में शहादत: अल्लाह का फ़र्मान है:

"जो मुसलमान अल्लाह की राह में क़त्ल हुये हैं उन्हें मुर्दा न समझो, वह तो हक़ीक़त में ज़िन्दा हैं, अपने रब के पास रोज़ी पा रहे हैं। जो कुछ अल्लाह ने अपने फ़ज़्ल से उन्हें दिया है उस पर खुश हैं और मुत्मइन् हैं कि जो ईमान वाले उनके पीछे दुनिया में रह गये और अभी वहां नहीं पहुँचे हैं, उनके लिये किसी ख़ौफ़ और रन्ज का मौक़ा नहीं है। वह अल्लाह के इन्आम और उसके फ़ज़्ल पर शादाँ व फ़रहाँ हैं और उनको मालूम हो चुका है कि अल्लाह मोमिनों के अज्र को बर्बाद नहीं करता।" (आले इम्रान, आय: १६९-१७१)

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का इर्शाद है:

"अल्लाह के यहाँ शहीद के लिये छ: ख़ूबियाँ हैं। (१) ख़ून की पहली बूंद गिरते ही बख़्शिश हो जाती है। (२) जन्नत में अपना ठिकाना देख लेता है और क़ब्र के अज़ाब से महफ़ूज़ हो जाता है। (३) क़्यामत की घबराहट से महफ़ूज़ रहेगा। (४) ईमान के ज़ेवर से सजा दिया जाता है। (५) ख़ूबसूरत आँखों वाली हूरों से निकाह होगा। (६) सत्तर क़रीबी रिश्तेदारों के हक़ में उसकी शफ़ाअ़त (सिफ़ारिश) क़ुबूल होगी।" (तिर्मिज़ी शरीफ़, इब्ने माजा)

५.) अल्लाह की राह में मुजाहिद की मौत: रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़रमाया:

"तुम किसे शहीद शुमार करते हो? उन्होंने अर्ज़ किया, ऐ अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम! जो अल्लाह की राह में जेहाद करते हुये क़त्ल हो जाये वह शहीद है। आप ने फ़रमाया: "तब तो मेरी उम्मत के शहीदों की गिन्ती कम रहेगी।" सहाबा ने अर्ज़ किया: किन-किन लोगों की गिन्ती शहीदों में होगी? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

"जो अल्लाह की राह में क़त्ल हुआ वह शहीद, जो अल्लाह की राह में मर गया वह भी शहीद, जो ताऊन की बीमारी में मरा वह भी शहीद, जो पेट की बीमारी से मरा वह भी शहीद और पानी में डूब कर मरने वाला भी शहीद है।" (मुस्लिम शरीफ़)

६.) **ताऊन की बीमारी में मौत आना:** इस बारे में बहुत सारी हदीसें मौजूद हैं, उनमें से एक हदीस में आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

"ताऊन हर मुसलमान के लिये शहादत है।"

(मुत्तफ़क़ अ़लैह)

७.) **पेट की बीमारी से मौत:** रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का इर्शाद है:

"जो पेट की बीमारी से मरा वो शहीद है।" (मुस्लिम)

८+९) **डूब कर या बोझ तले दब कर मरना:** इस बारे में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इर्शद फ़रमाया:

"शहीदों की पांच क़िस्में हैं: (१) ताऊन की बीमारी से मरने वाला। (२) पेट की बीमारी से मरने वाला। (३) डूब कर मरने वाला। (४) बोझ तले दब कर मरने वाला। (५) और अल्लाह की राह में जेहाद के दौरान मरने वाला।" (मुस्लिम)

१०.) **बच्चे की पैदाइश के बाद औरत का नेफ़ास की हालत में मरना:** हज़रत उबादा बिन सामित रज़ि० बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम अब्दुल्लाह बिन रवाहा को देखने के लिये तशरीफ़ ले गये, वह आपके इस्तिक़बाल के लिये बिस्तर से न उठ सके, आप ने पूछा क्या तुम्हें मालूम है कि मेरी उम्मत के शहीद कौन हैं? सहाबा ने फ़रमाया, "मुसलमान का क़त्ल होना शहादत है", आप ने फ़रमाया:

"इस सूरत में तो मेरी उम्मत के शहीद कम होंगे।

मुसलमान का क़त्ल होना शहादत है, ताऊन की बीमारी से मरना भी शहादत है, वह औरत जो बच्चे की पैदाइश के सबब फ़ौत हो जाये वह भी शहीद है। (बच्चा अपनी नाल की वजह से माँ को जन्नत में ले जायेगा) (मुस्नद अहमद)

११.+१२.) **जल कर मरना, पहलू के दर्द से मरना:** हज़रत जाबिर बिन उतैक रज़ि० रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम से रिवायत करते हैं कि आप ने फ़रमाया:

"अल्लाह की राह में शहीद होने के अलावा शहीद ७ क़िस्म के हैं: (१) ताऊन की बीमारी से मरने वाला, (२) डूब कर मरने वाला, (३) पहलू के दर्द से मरने वाला, (४) पेट की बीमारी से मरने वाला, (५) जल कर मरने वाला, (६) मल्बे के नीचे दब कर मरने वाला, (७) वह औरत, जो बच्चे के पैदा होते वक़्त मर जाये, यह सब शहीद हैं।"

(मुअत्ता इमाम मालिक, अबू दावूद)

१३.) **सिल की बीमारी से मौत हो:** इस मर्ज़ के बारे में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने शहीदों की क़िस्में बयान करते हुये फ़रमाया:

"वस्सिल्लु शहादतुन" सिल से मरना भी शहादत है।

(मज्मउज़्ज़वायद)

नोट : मरीज़ के फेफड़े में ज़ख़्म होने से ख़ून आने लगता है, इसी को सिल या तपे-दिक़ कहते हैं।

१४.) **अपने माल की हिफ़ाज़त करते हुये जान दे देना:** इस सिलसिले में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का इर्शाद है:

"जो आदमी अपने माल की वजह से क़त्ल हुआ (दूसरी रिवायत में है कि जिस आदमी का माल नाहक़ तरीक़े

से लेने की कोशिश की गई, फिर वह उस माल को बचाते हुये मारा गया) वह शहीद है।" (बुख़ारी शरीफ़)

१५.+१६.) दीन और इज़्ज़त की हिफ़ाज़त में मौत आना: रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का इर्शाद है:

"जो आदमी अपने माल की हिफ़ाज़त में मारा गया वह शहीद है, जो अह्ल व अ़याल की इ़ज़्ज़त की हिफ़ाज़त में मारा गया वह शहीद है, जो अपने दीन की हिफ़ाज़त में मारा गया वह शहीद है, जो अपने ख़ून की हिफ़ाज़त में मारा गया वह भी शहीद है।"

(अबू दावूद, तिर्मिज़ी, नसई)

१७.) अल्लाह की राह में जिहाद के इन्तिज़ार में मौत आना: हदीस पाक में यूँ है:

"जिस ने अल्लाह तआ़ला को खुश रखने के लिये "लाइलाह इल्लल लाह" कहा और उसी पर मरा वह जन्नत में दाख़िल होगा। अल्लाह को खुश रखने के लिये किसी दिन का रोज़ा रखा और यही काम बराबर करते हुये मरा तो भी जन्नत में दाख़िल होगा। जिसने अल्लाह को राज़ी करने के लिये सदक़ा किया और उम्र भर करता रहा, वह भी जन्नत में दाख़िल होगा।"

(मुस्नद अहमद)

१८.) जिस आदमी को ज़ालिम हाकिम ने सिर्फ़ इसलिये क़त्ल कर दिया कि उसने नसीहत की थी, वह भी शहीद है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

"हज़रत हम्ज़ा बिन अ़ब्दुल मुत्तलिब शहीदों के सरदार हैं, और वह आदमी भी जिसने ज़ालिम इमाम (हाकिम) को भलाई की नसीहत की थी और बुराई से रोका, तो हाकिम ने उसे क़त्ल कर दिया।"

(मुस्तदरक हाकिम)

मुर्दा के बारे में राय देना

२६ कम से कम दो सच्चे मुसलमान इल्म और तक़्वा वाले की किसी मय्यित के मुतअल्लिक़ अच्छी राय उसके लिये जन्नत का बाइस है। वह उसके पड़ोसी और जानने वाले हों। इस सिलसिले में कई हदीसें मौजूद हैं। हज़रत अनस रज़ि० रिवायत करते हैं कि एक जनाज़ा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के पास से गुज़रा, उसकी तारीफ़ हुई (बहुत सारे सहाबा ने भी ताईद की और कहा कि हमारे ख़्याल में वह अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम से मुहब्बत करता था) यह सुनकर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

"वाजिब हो गई"

एक दूसरा जनाज़ा गुज़रा तो उसके बारे में सख़्त लफ़्ज़ों में राय बयान हुई (बहुत सारे सहाबा किराम ने ताईद करते हुये कहा कि दीन के मुआमले में अच्छा नहीं था) नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने तीन बार फ़रमाया:

"वाजिब हो गई, वाजिब हो गई, वाजिब हो गई।"

हज़रत उमर रज़ि० ने अर्ज़ किया मेरे माँ-बाप आप पर कुर्बान! एक जनाज़ा गुज़रा उसकी तारीफ़ हुई तो आप ने फ़रमाया "वाजिब हो गई" दूसरा जनाज़ गुज़रा जिसके बारे में अच्छी राय नहीं दी गई तो भी आप ने फ़रमाया "वाजिब हो गई", आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़रमाया:

"जिसकी तुमने तारीफ़ की उसके लिये जन्नत वाजिब हो गई और जिसे तुमने सख़्त लफ़्ज़ों में याद किया उसके लिये आग वाजिब हो गई", आपने आगे

फ़रमाया: "फ़रिशते आसमानों में अल्लाह के गवाह हैं और तुम दुनिया में अल्लाह के गवाह हो (तीन बार फ़रमाया)"

एक दूसरी रिवायत में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़रमाया:

"मोमिन ज़मीन पर अल्लाह के गवाह हैं" (अल्लाह के कुछ फ़रिश्ते लोगों के बारे में अच्छी बुरी राय बनी आदम की ज़ुबान से कहला देते हैं, आदमी जैसा भी हो, अच्छा या बुरा) (मुस्लिम, मुस्नद् अहमद)

★ हज़रत अबू अस्वद दैली रज़ि० बयान करते हैं कि मैं मदीना शरीफ़ हाज़िर हुआ जब कि वहां एक बीमारी फैली थी जिसकी वजह से बहुत सारे लोग मर रहे थे, मैं हज़रत उमर रज़ि० के पास बैठ गया, इतने में एक जनाज़ा गुज़रा उसे देखकर लोगों ने तारीफ़ की, हज़रत उमर ने फ़रमाया, "वाजिब हो गई" मैंने उनसे मालूम किया कि क्या वाजिब हो गई? उन्होंने फ़रमाया: मैंने भी इसी तरह कहा है जैसे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया था:

"जिस मुसलमान के हक़ में चार मुसलमान भलाई की गवाही दे दें अल्लाह तआ़ला उसे जन्नत में दाख़िल करेगा।" हम ने पूछा कि तीन के बारे में क्या हुक्म है? तो उन्होंने कहा कि तीन आदमियों की गवाही भी, हमने पूछा कि अगर दो ही आदमी गवाही दें? उन्होंनें कहा कि दो की गवाही भी काफ़ी है। हज़रत अस्वद् कहते हैं कि फिर हमने एक के बारे में नहीं पूछा।" (बुख़ारी)

★ कोई मुसलमान मर जाये और उसके चार क़रीबी पड़ौसी उसके हक़ में भलाई की गवाही दे दें तो अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है:

"मैंने तुम्हारी बात मान ली, और जो बात तुम नहीं

जानते उसे भी माफ़ कर दिया।" (?)

यह बात याद रहे कि ऊपर की तीनों हदीसों से यह बात ज़ाहिर होती है कि यह हुक्म सहाब-ए-किराम रज़ि० के साथ ख़ास नहीं है, बल्कि यह ख़ुसूसिय्यत उन मोमिनों के लिये भी है जिन्होंने इन सहाबा की तरह ईमान, इल्म और सच्चाई के साथ गवाही दी। यही बात हाफ़िज़ इब्ने हजर ने "फ़त्हुल् बारी" में बयान की है, तफ़्सील वहां देखें।

तीसरी हदीस में चार गवाहों की बात की गई है, ऐसा मालूम होता है कि यह हदीस हज़रत उमर रज़ि० की हदीस से पहले की हदीस है, हज़रत उमर वाली हदीस में दो आदमियों की गवाही को काफ़ी समझा गया है, इसलिये वही काफ़ी है।

गर्हन् के वक़्त मौत

२७ अगर किसी की मौत सूरज या चाँद गरहन् के वक़्त आ जाये तो यह मरने वाले की बड़ाई का निशान नहीं होता। इस क़िस्म के अक़ीदे जाहिलाना ख़ुराफ़ात हैं, इसकी तर्दीद् रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने हज़रत इब्राहीम रज़ि॰ (आपके साहब-ज़ादे) की वफ़ात के दिन फ़रमा दी थी, क्योंकि उस वक़्त सूरज गर्हन् लगा था। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने हम्द व सना के बाद ख़ुत्बा देते हुये फ़रमाया:

"ऐ लोगो! अहले जाहिलिय्यत यह कहा करते थे कि सूरज या चाँद को ग्रहन् किसी बुज़ुर्ग आदमी की वफ़ात की वजह से लगता है। सुन लो! यह तो अल्लाह की निशानियों में से दो निशानियां हैं, किसी के मरने या पैदा होने से नहीं गहनाते, बल्कि अल्लाह तआ़ला इनके ज़रिए अपने बन्दों को डराता है। चुनान्चे जब तुम ऐसी सूरत देखो, तो अल्लाह का ज़िक्र करो, दुआ करो, इस्तिग़फ़ार करो, सदक़ा करो, ग़ुलाम अज़ाद करो, मस्जिदों में जाकर नमाज़ अदा करो, यहाँ तक कि यह वक़्त टल जाये।"

(बुख़ारी, मुस्लिम वग़ैरह की हदीसों का निचोड़)

मुर्दा को नहलाना

२८ जब किसी इन्सान की मौत हो जाये तो कुछ लोगों को उसके गुस्ल का इन्तज़ाम करना चाहिये। (इसके लिये मस्अला नं. १७ देखें) गुस्ल के वाजिब होने के बारे में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का हुक्म कई हदीसों में मौजूद है।

★ जिस एहराम बांधे हुये हाजी को उसकी ऊंटनी ने रौंद डाला था, उसके बारे में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़रमाया था:

"इसे बैरी के पत्तों और पानी से गुस्ल दो" (मुस्लिम)

★ अपनी बेटी हज़रत ज़ैनब के बारे में आपने हुक्म दिया था:

"इन्हें तीन, पाँच, सात या इससे ज़्यादा बार गुस्ल दो"

(देखें मस्अला नं. २९) (बुख़ारी, मुस्लिम)

२९ गुस्ल देते समय इन बातों का लिहाज़ करें:

१) गुस्ल तीन या इससे ज़्यादा बार देना चाहिये।
२) गुस्ल ताक़ बार दिया जाना चाहिये।
३) किसी एक मर्तबा पानी के साथ बैरी के पत्ते, अश्नान या साबुन का इस्तेमाल होना चाहिये, ताकि सफ़ाई हो जाये।
४) गुस्ल देते वक़्त आख़िरी बार पानी में कुछ ख़ुश्बू मिला देनी चाहिये, काफ़ूर हो तो बेहतर है।
५) मेंढियां खोल कर अच्छी तरह धोना चाहिये।
६) बालों को कन्घी की जाये।
७) औरत के बालों की तीन चोटियाँ बनाकर पीछे डाल दें।
८) गुस्ल दायें तरफ़ से और वज़ू की जगहों से शुरू करें।
९) अगर मजबूरी न हो तो मर्द को मर्द और औरत को औरत गुस्ल दे।

ऊपर बयान किये गये मस्अलों का सुबूत हज़रत उम्मे अ़तिय्या रज़ि० की हदीस है जिसमें वह बयान फ़रमाती हैं:

> *"रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम हमारे पास तशरीफ़ लाये उस वक़्त हम ज़ैनब को ग़ुस्ल दे रहीं थीं: आप ने इर्शाद फ़रमाया: तीन, पाँच, सात और अगर मुनासिब समझो तो इससे भी ज़्यादा बार ग़ुस्ल दो।"*

हज़रत उम्मे अ़तिय्या बयान करती हैं कि मैंने मालूम किया कि ताक़ बार ग़ुस्ल दूँ? तो आप ने फ़रमाया:

> *"हाँ, और आख़िरी मर्तबा में कुछ काफ़ूर भी मिला लेना, और जब नहला चुको तो मुझे बता देना।"*

हज़रत अ़तिय्या रज़ि० कहतीं हैं कि जब हम नहला-धुला कर फ़ारिग़ हो गयीं तो आपको ख़बर दी, आप ने हमारी तरफ़ चादर भेजकर फ़रमाया:

> *"(नहलाते समय) दायें तरफ़ और वज़ू वाली जगहों से शुरू करो" (बुख़ारी, मुस्लिम)*

१०.) मुर्दा के ऊपर बड़ा सा कपड़ा डालकर उसके कपड़े उतारे जायें और फिर उसके नीचे से किसी छोटे कपड़े की मदद से ग़ुस्ल दिया जाये। इसी तरह रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के ज़माना में होता था। यही बात हज़रत आइशा रज़ि० की हदीस से समझ में आती है, वह फ़रमाती हैं:

> *"जब सहाबा ने आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम को ग़ुस्ल देने का इरादा किया तो सब आपस में कहने लगे कि अल्लाह की क़सम! हम नहीं जानते कि क्या करें? हम आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के कपड़े उसी तरह उतार लें जिस तरह अपने मुर्दों के कपड़े उतारते हैं, या कपड़ों समेत ग़ुस्ल दें? जब इख़्तलाफ़*

हुआ तो अल्लाह तआला ने उन पर नींद तारी कर दीं, यहां तक कि सब की गर्दनें सीने की तरफ़ झुक गयीं, फिर नामालूम आदमी ने घर के कोने से आवाज़ लगाई, "रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम को कपड़ों समेत गुस्ल दो" चुनान्चे उन्होंने ऐसा ही किया, क़मीस के ऊपर पानी डालते थे और हाथों के बजाए क़मीस से ही मलते थे।"

हज़रत आइशा रज़ि० बयान करती हैं कि अगर इस बात का मुझे पहले ही इल्म हो जाता तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की बीवियां ही आप को गुस्ल देतीं। (अबू दावूद)

११.) मुर्दा के सारे जिस्म को ढांप कर छोटे कपड़े की मदद से गुस्ल देने का मक़सद सिर्फ़ यही है कि मुर्दा के सतर (शर्मगाह) को न देखा जाये। सहीह बात यह है कि मर्द का सतर नाफ़ से घुटने तक है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

"नाफ़ और घुटने के दर्मियान सतर है।" (अबू दावूद)

एक दूसरी जगह आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़रमाया:

"रान भी सतर में शामिल है।" (तिर्मिज़ी)

एक औरत का जिस्म भी दूसरी औरत के लिये सतर है, अल्बत्ता वह हिस्से जो ज़ीनत को ज़ाहिर करने के लिये किये जाते हैं वह (सतर में) शामिल नहीं: जैसे सर, कान, गर्दन, सीने का ऊपरी हिस्सा, हार पहनने की जगह, कलाई और बाज़ू का कुछ हिस्सा, पहुंची पहनने की जगह, पांव, पाज़ेब पहनने की जगह, पिंडली के नीचे का हिस्सा, इन को छोड़ कर सारा जिस्म सतर है, कोई भी औरत उन्हें न देखे। इन्हें ज़ाहिर भी न करना चाहिये: अल्लाह तआ़ला का फ़र्मान है:

"आम ज़ाहिर चीज़ों के अलावा वह बनाव-सिंगार न ज़ाहिर करें, मगर उन लोगों के सामने: शौहर, बाप शौहरों के बाप (ससुर) अपने बेटे, शौहरों के बेटे

(दूसरी बीवी से) भाई, भाईयों के बेटे, बहनों के बेटे, अपने मेल जोल की औरतें" (सूर: नूर, आय: ३१)

१२.) 'मुहरिम' (जिसने हज या उम्रे का एहराम बांधा हो) इससे अलग हैं, यानि मुहरिम मर्द को खुश्बू लगाना जायज़ नहीं, जैसा कि हदीस से साबित है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने एक मुहरिम मर्द के बारे में फ़रमाया था:

> *"उसे हुनूत न लगाओ (एक दूसरी रिवायत में फ़रमाया:) उसे खुश्बू न लगाओ वह क़यामत के दिन लब्बैक कहते हुये उठेगा।" (मुस्लिम)*

१३.) मियां-बीवी एक दूसरे को गुस्ल दे सकते हैं, गुस्ल न दे सकने के ताल्लुक़ से कोई दलील व सुबूत नहीं है। जब तक दलील न हो जायज़ है। शौहर-बीवी एक दूसरे को गुस्ल दे सकते हैं, इस की ताईद दो हदीसों से होती है:

१.) हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि० बयान करती हैं:

> *"अगर यह हाल मुझे मालूम होता तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम को आप की बीवियां ही गुस्ल देतीं।" (अबू दावूद)*

२.) हज़रत आइशा बयान करती हैं:

> *"रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम बक़ीअ़ से जनाज़े के बाद मेरे पास तशरीफ़ लाये, मेरे सर में सख़्त दर्द हो रहा था और मैं कह रही थी, "हाय, मेरा सर गया," आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया: "बल्कि हाये मेरा सर," अगर तुम मुझ से पहले मर गयीं तो तुम्हें कोई नुक़्सान नहीं मैं खुद तुम को गुस्ल दूँगा, खुद ही कफ़न दूँगा, फिर तुम्हारा जनाज़ा पढ़ कर खुद ही दफ़्न करूंगा" (मुस्नद अहमद, सीरत इब्ने हिशाम)*

७.) जो आदमी गुस्ल देने के तरीक़ों से वाक़िफ़ हो वही गुस्ल दे, ख़ास कर जो क़रीबी रिश्तेदार हों। इसलिये कि सहाबा ने आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम को गुस्ल दिया था वह गुस्ल देने के तरीक़ों से वाक़िफ़ थे और क़रीबी रिश्ते-दार भी थे। हज़रत अली रज़ि० बयान फ़रमाते हैं:

> *"मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम को गुस्ल दिया, मैं आप के जिस्मे-पाक के बारे में ग़ौर कर रहा था लेकिन कोई ख़िलाफ़े मामूल बात न मिली, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ज़िन्दगी में और ज़िन्दगी के बाद सरापा ख़ुश्बू थे।" (इब्ने माजा)*

३० जो आदमी गुस्ल देने की ज़िम्मेदारी उठायेगा उसके लिये बहुत बड़ा सवाब है, लेकिन दो शर्तों के साथ

१) मुर्दा के ऐब को छुपाये, और कोई कमी या ऐब की बात नज़र आये, तो किसी से बयान न करे। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का फ़र्मान है:

> *"जिस ने किसी मुसलमान को गुस्ल दिया और उसके ऐब को छुपा लिया, अल्लाह तआ़ला उसे चालीस बार माफ़ करता है। जिसने क़ब्र खोद कर दफ़्न किया उसे इतना सवाब है जैसे किसी को क़यामत तक के लिये रहने को जगह दे दी। जिसने कफ़न पहनाया, अल्लाह तआ़ला क़यामत के दिन जन्नत के बेहतरीन रेशम के जोड़े और कम-ख़ाब (क़ीमती जोड़ा) पहनायेगा।"*
>
> *(मुस्तदरक हाकिम)*

२) ऊपर के सारे काम (मुर्दा को कफ़्नाने और दफ़्नाने के तअल्लुक़ से) सिर्फ़ अल्लाह को ख़ुश रखने के लिये करें, इसके बदले शुक्र, एहसान या दुनिया का किसी क़िस्म का कोई फ़ाइदा न चाहें। अल्लाह तआ़ला सिर्फ़ उन्हीं कामों को क़ुबूल करता है, जो सिर्फ़ उसको ख़ुश रखने

के लिये किये जायें। चुनान्चे अल्लाह तआ़ला का इर्शाद है:

"ऐ नबी (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) आप कह दीजिये कि मैं तो तुम ही जैसा एक इन्सान हूँ, मेरी तरफ़ वह्यि की जाती है कि तुम्हारा अल्लाह बस एक ही है, पस जो कोई अपने रब से मिलने की उम्मीद रखता है उसे चाहिये कि नेक काम करे और इबादत (बन्दगी) में उसके साथ किसी को शरीक न ठहराये।

(सूरः कहफ़, आयः ११०)

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़रमाया:

"अमल का दार व मदार निय्यतों पर है, हर आदमी को निय्यतों के लिहाज़ से अज्र दिया जायेगा। जो अल्लाह और रसूल के लिये हिजरत करेगा, वह अल्लाह और रसूल के लिये हिजरत हो गी और जो दुनिया हासिल करने या किसी औरत से निकाह करने के लिये हिजरत करेगा, उसकी हिजरत उसी खाते में जायेगी जिसकी उसने निय्यत की होगी। (बुख़ारी, मुस्लिम)

३१ जो मय्यित को गुस्ल दे उसके लिये मुनासिब है कि ख़ुद भी गुस्ल कर ले। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का इर्शाद है:

"जो किसी मुर्दे को गुस्ल दे, वह ख़ुद भी गुस्ल कर ले, और जो उस को उठाये वह वज़ू कर ले।" (अबू दावूद)

नोट : इस हदीस-पाक से यह मालूम होता है कि गुस्ल करना ज़रूरी है लेकिन दूसरे दलायल व शवाहिद की वजह से वाजिब नहीं, बल्कि मुस्तहब ओर बेहतर है, इसलिये कि एक दूसरी हदीस में आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

"जब मुर्दे को गुस्ल दो तो तुम पर गुस्ल ज़रूरी नहीं, क्योंकि तुम्हारे मुर्दे नापाक नहीं होते, बस (नहलाने

के बाद) अपने हाथ धो लो, यही काफ़ी है।"

(मुस्तदरक हाकिम)

गुस्ल न करने के तअल्लुक़ से हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर का क़ौल है:

"जब हम मुर्दे को नहलाते थे तो कोई गुस्ल कर लेता था और कोई नहीं" (दारू-कुत्नी, तारीख़े बग़दाद)

३२ जिहाद में क़त्ल होने वाले शहीद को गुस्ल नहीं दिया जायेगा, चाहे वह शहीद जनाबत की हालत में हो। इस मस्अले के तअल्लुक़ से बहुत सारी हदीसें हैं:

१) हज़रत जाबिर रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़रमाया:

"इन्हें ख़ून समेत दफ़्न कर दो (यह बात आपने उहुद के दिन फ़रमाई) और आप ने शहीदों को गुस्ल नहीं दिया (बुख़ारी)

एक दूसरी रिवायत में है कि आप ने फ़रमाया:

"मैं इनका गवाह हूँ, इन्हें ख़ून के साथ लपेट दो, जो भी अल्लाह की राह में ज़ख़्मी हो जाये वह क़यामत के दिन इस हाल में आयेगा कि ख़ून टपक रहा होगा, रंग तो ख़ून जैसा ही होगा लेकिन ख़ुश-बू कस्तूरी की सी होगी। (बैहक़ी) (एक और रिवायत में फ़रमाया:) इन्हें गुस्ल मत दो, हर ज़ख़्म से क़यामत के दिन कस्तूरी की ख़ुश-बू भड़केगी। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने उनकी जनाज़ा की नमाज़ भी नहीं पढ़ी।" (मुस्नद इमाम अहमद)

२) हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० रिवायत करते हैं कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम एक लड़ाई में थे, उस लड़ाई में अल्लाह तआ़ला ने बहुत सारा ग़नीमत का माल इनायत फ़र्माया, आप ने पूछा:

"क्या कोई मौजूद नहीं है? सहाबा ने कहा: फलाँ-फ़लाँ मौजूद नहीं है। फिर आपने पूछा: क्या अब भी कोई मौजूद नहीं है? सहाबा ने कहा कि नहीं, आप ने फ़रमाया:, "मुझे जलीबीब देखाई नहीं दे रहे हैं, उन्हें तलाश करो, चुनान्चें उन्हें उन सात आदमियों के बीच में पाया जिन्हें क़त्ल करके शहीद हुये थे, आप तशरीफ़ लाये और उनके पास खड़े होकर फ़रमाया: "इन्होंने सात को क़त्ल करके शहादत पाई," आप ने तीन बार यह जुम्ला दुहराया, "यह मेरे हैं और मैं इनका हूँ" फिर आपने अपने बाज़ू में उन्हें उठा लिया उनकी चारपाई सिर्फ़ आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के बाज़ू थे और क़ब्र खोदी गई और दफ़्न कर दिया गया बग़ैर गुस्ल दिये (मुस्लिम)

३) हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० उहुद के दिन हज़रत हन्ज़ला बिन अबू आ़मिर रज़ि० की शहादत का हाल बयान करते हुये कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़रमाया:

"तुम्हारे साथी (हन्ज़ला) को फ़रिश्ते गुस्ल दे रहे हैं, इनकी बीवी से मालूम करो। बीवी ने कहा, कि जिहाद की आवाज़ सुनते ही जनाबत की हालत में जिहाद के लिये निकल गये थे। आपने फ़रमाया: "इसीलिये इन्हें फ़रिश्तों ने गुस्ल दिया है।" (मुस्तदरक, हाकिम)

मुर्दे का कफ़न

३३ मुर्दे को गुस्ल देने के बाद कफ़न देना ज़रूरी है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने उस मुहरिम के बारे में हुक्म दिया था जिसे ऊंटनी ने गिराकर पैरों से कुचल कर मार डाला था:

"इसे कफ़न दो" (मुस्लिम शरीफ़)

३४ कफ़न या उसकी क़ीमत मय्यित के छोड़े हुये माल से ली जायेगी, चाहे उसके अलावा कुछ भी न छोड़ा हो। हज़रत ख़ब्बाब बिन इर्त रज़ि० बयान फ़रमाते हैं कि हम लोगों ने सिर्फ़ अल्लाह की रिज़ा व ख़ुश-नूदी की ख़ातिर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के साथ मिलकर हिजरत की थी, चुनान्चे हमारा अज्र व सबाब अल्लाह तआ़ला के यहां महफ़ूज़ हो गया। हमारे कुछ साथी इस हाल में दुनिया से चले गये कि उन्हें हिजरत से कोई माली फ़ाइदा न पहुँचा, उन्हीं में से एक हज़रत मुस्अ़ब बिन उमैर रज़ि० भी थे, यह उहुद के दिन जिहाद में शहीद हुये थे, इन्होंने सिवाय एकधारी दार चादर के कुछ भी न छोड़ा, चुनान्चे जब हम उनका सर ढांकते थे तो पैर खुल ज़ाता था और अगर पैर ढांकते तो सर खुल जाता था, इस हालत में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

"चादर को सर की तरफ़ डाल दो" (एक दूसरी रिवायत में है) चादर से इनका सर ढांक दो और पांव पर इज़ख़िर घास डाल दो" (बुख़ारी, मुस्लिम)

३५ कफ़न इतना लम्बा चौड़ा हो जिससे तमाम बदन ढंक जाये। इस सिलसिले में हज़रत जाबिर बिन अब्दुल्लाह रज़ि० रिवायत करते हैं: कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने एक दिन ख़ुत्बे में

एक साहबी का ज़िक्र फ़रमाया, जिन्हें मरने के बाद छोटा कफ़न दिया गया था और रात को दफ़न किया था, चुनान्चे आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

"किसी को रात में दफ़न न किया जाये यहां तक कि उसकी जनाज़े की नमाज़ पढ़ ली जाये, मगर यह कि कोई मजबूरी हो (और फ़रमाया) जब कोई मुसलमान अपने भाई को कफ़न दे तो अगर मुमकिन हो तो अच्छा कफ़न दे" (मुस्लिम शरीफ़)

उलमा-ए-किराम कहते हैं कि, "अच्छे कफ़न" से मुराद यह है कि साफ़-सुथरा हो, मोटा हो, सारे बदन को छुपाने वाला हो, और ओसत दर्जे का हो। अच्छे से मुराद ज़्यादा मंहगा और क़ीमती न हो।

३६ अगर कफ़न छोटा है और दूसरा नहीं है, तो मुर्दे का सिर और बदन ढांप दिया जाये और जितना खुला हुआ हिस्सा है उस पर घास डाल दी जाये। जैसा कि हज़रत मुस्अ़ब बिन उमैर रज़ि० के कफ़न के बारे में अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया था:

"चादर को सर की तरफ़ डाल दो और पांव पर इज़्ख़िर घास डाल दो" (बुख़ारी, मुस्लिम)

३७ अगर कफ़न का कपड़ा कम है और मुर्दे ज़्यादा हैं, तो कई लाशों को एक ही कफ़न में दफ़्नाया जा सकता है, इस तरह कि कपड़ा काट कर उन पर तक़सीम कर दिया जाये। और जिसे ज़्यादा क़ुरआन याद हो, उसे पहले रखा जाये। हज़रत अनस बिन मालिक रज़ि० बयान करते हैं कि उहुद के दिन आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम हज़रत हम्ज़ा रजि.० की लाश के पास गये, जिनके कान, नाक, होंट को काट कर सूरत बिगाड़ दी गई थी, आपने फ़रमाया:

"अगर सफ़िय्या (हज़रत हम्ज़ा की बहन) बर्दाश्त कर लेतीं तो मैं (हज़रत हम्ज़ा की लाश को) परिन्दों और

दरिन्दों के खाने के लिये छोड़ देता, अल्लाह तआ़ला इन्हें क़्यामत के दिन परिन्दों और दरिन्दों के पेट से उठाता"

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने एक चादर में उन्हें कफ़न दिया, हाल यह था कि सिर ढांपते तो पांव नन्गे हो जाते और अगर पांव छुपाते तो सिर नन्गा हो जाता, चुनान्चे आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम नेउनका सिर ढांप दिया और इनके अलावा किसी शहीद के जनाज़े की नमाज़ अदा नहीं की गई। हज़रत अनस रज़ि० बयान करते हैं कि शहीदों की लाशें ज़्यादा थीं और कपड़े कम थे, इसलिये दो-दो, तीन-तीन को आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम एक ही क़ब्र में दफ़्न फ़रमा रहे थे। जिन्हें कुरआन ज़्यादा याद होता उन्हें सबसे पहले रखते और दो तीन को एक ही कफ़न में दफ़्नाया। (अबू दावूद, तिर्मिज़ी)

३८ जिन कपड़ों में शहादत नसीब हुई है उन्हें उतारना नहीं चाहिये, बल्कि उसी तरह दफ़्न कर देना चाहिये, जैसा कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने उहुद के शहीदों के बारे में फ़रमाया था:

"उन्हें, उन्हीं के कपड़ों में लपेट दो" (मुस्नद अहमद)

३९ शहीदों को उनके कपड़ों के ऊपर एक, या एक से ज़्यादा कपड़ों में कफ़न देना चाहिये, जैसा कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने हज़रत मुस्अब बिन उमैर रज़ि० को कफ़न दिया। (देखें मस्अला नं. ३४)

४० मुहरिम (एहराम की हालत में मरने वाले) को उन्हीं कपड़ों में कफ़न दिया जायेगा, जिसमें उसकी मौत हुई है। जिस मुहरिम को ऊंटनी ने मार डाला था उसके बारे में आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया था:

"उसे उन्हीं कपड़ों में कफ़न दो (जिन दो कपड़ों में उसने एहराम बांधा है) (मुस्लिम-किताबुल हज)

नोट : यह हदीस तफ़्सील से मस्अला नं. १७ में बयान हो चुकी है।

४१ कफ़न में नीचे की बातों का ख़्याल रखा जाये:

१) कफ़न सफ़ेद हो। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़रमाया:

"सफ़ेद कपड़े पहना करो यह तुम्हारा बेहतरीन लिबास है और इसी में मुर्दों को कफ़न दिया करो"

(अबू दावूद, तिर्मिज़ी)

२) तीन कपड़ों में कफ़न देना चाहिये। हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि० बयान करती हैं कि:

"रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम को तीन सफ़ेद सूती, सहूली चादरों में कफ़न दिया गया इस में न क़मीस थी और न पगड़ी (बुख़ारी, मुस्लिम,) आप को उनमें अच्छी तरह लपेट दिया गया"

(मुस्नद अहमद)

३) अगर हो सके तो एक हल्की धारीदार चादर कफ़न में शामिल हो। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़रमाया:

"जब तुम्हारा कोई मर जाये, तो अगर मिल जाये तो कफ़न में एक धारीदार चादर शामिल कर ली जाये।"

(अबू-दावूद)

४) उसे तीन बार ख़ुश्बू की धूनी दी जाये, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़रमाया:

"जब तुम मय्यित को ख़ुश्बू की धूनी दो तो तीन मर्तबा दो" (मुस्नद अहमद, मुस्तदरक हाकिम)

नोट : इस हुक्म में एहराम की हालत में मरने वाला शामिल नहीं, क्योंकि जिस मुहरिम सहाबी को ऊंटनी ने गिरा कर मार डाला था उसके बारे में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया था

"उसे ख़ुश्बू न लगाओ" (देखें मस्अला न. १७)

४२ क़ीमती कफ़न जायज़ नहीं और न ही तीन कपड़ों से ज़्यादा

कफ़न जायज़ है, इस के लिए यह तरीक़ा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के कफ़न के ख़िलाफ़ है *(जैसा कि ऊपर मस्अला न० ४१ में बयान हुआ है)* और इस में माल भी बर्बाद होता है, ख़ास तौर पर जब कि ज़िन्दा इस का ज़्यादा हक़ दार है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया :

> *" अल्लाह तआला ने तुम्हारे लिये तीन बातें मना की हैं : फुज़ूल बातें करना, माल बर्बाद करना, बिला वजह सवाल करना (बुख़ारी, मुस्लिम)*

अल्लामा नवाब सिद्दीक़ हसन खाँ ने "अल-रौज़तुन्न दिय्या" में लिखा है कि तीन से ज़्यादा, या बहुत क़ीमती कफ़न इस्तेमाल करना कोई अच्छी बात नहीं, अगर शरीअ़त का हुक्म न भी हो तब भी वह माल को बर्बाद करने के हुक्म में शामिल है, इस लिए कि न तो मुर्दे को फ़ाइदा पहुंचता है और न ही ज़िन्दों को। अल्लाह तआ़ला हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ि० पर रहम फ़रमाये, जब उन से कपड़ों में से कफ़न के बारे में कहा गया तो जवाब दिया :

> *" नये कपड़े का ज़िन्दा ज़्यादा हक़ दार है, मेरे लिए बस यही पुराना काफ़ी है" (बुख़ारी शरीफ़)*

४३ औरत का कफ़न मर्द ही की तरह हो गा, क्यों कि फ़र्क़ की कोई दलील नहीं।

जनाज़ा उठाना और उसके साथ जाना

४४ जनाज़ा *(दफ़्न करने के लिए)* ले जाना और उस के साथ जाना वाजिब है। यह एक मुसलमान का अपने मुसलमान भाइयों पर हक़ है। इस तअ़ल्लुक़ से कई हदीसें हैं, सिर्फ़ दो हदीसें बयान की जाती हैं। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ईशाद फ़रमाया :

> *" एक मुसलमान के दूसरे मुसलमान पर पाँच हक़ हैं (१)सलाम का जवाब देना (२) मरीज़ की अयादत करना (३) जनाज़े के साथ जाना (४) दावत कुबूल करना (५) छींकने वाले का जवाब देना" (बुख़ारी मुस्लिम)*

एक दूसरी हदीस में आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यूँ फ़र्माया:

> *" मरीज़ की अ़यादत करो, जनाज़ों के साथ जाओ, यह तुम्हें आख़िरत को याद दिलायें गे" (इब्ने अबी शैबा, इब्ने हिब्बान)*

४५ जनाज़ा के साथ जाने की दो सूरतें हैं :

(१) **घर से लेकर नमाज़ तक साथ जाना** *(२)* **घर से ले कर दफ़न करने तक** : दोनों सूरतों पर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अमल फ़र्माया है। हज़रत अबू सईद खुद्री रज़ि०रिवायत करते हैं:

> *" रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के मदीना शरीफ़ जाने के बाद जब किसी मुसलमान की मौत का वक़्त करीब होता तो हम आप को ख़बर कर देते,*

आप तशरीफ़ लाते और उस के हक़ में मग्फ़िरत की दुआ फ़रमाते यहाँ तक कि उस की रुह निकल जाती, चुनान्चे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और सहाबा दफ़्न तक रुक जाते, अक्सर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को देर तक रुकना पड़ता। जब हमें एहसास हुआ कि इस से आप को परेशानी होती है तो कुछ सहाबा ने आपस में राय किया कि हम किसी की ख़बर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम को उस वक़्त तक न दें जब तक उसकी जान निकल न जाये, उस की वफ़ात के बाद ख़बर करें, ऐसी सूरत में आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को न तो परेशानी होगी और न रुकना पड़े गा। फिर हम ने यह तरीक़ा अपना लिया, हम रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को (मरीज़ की) मौत हो जाने के बाद ख़बर करते थे, फिर आप आते और उस की जनाज़ा की नमाज़ अदा फ़रमाते, और फ़ौरन पलट जाते और कभी दफ़्न तक रुक जाते, यही तरीक़ा काफ़ी वक़्त तक जारी रहा, फिर हम ने मश्वरा किया कि अगर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ख़बर ही न करें और जनाज़ा आप की ख़िदमत में ले जायें, ताकि आप अपने घर के पास ही उस की नमाज़ अदा कर दें तो इस में आप के लिए और भी आसानी होगी, फिर आज तक यही तरीक़ा रहा" (हाकिम, इब्ने हिब्बान)

४६ बिला शुब्हा दूसरी सूरत पहली से अफ़्ज़ल है, क्यों कि रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का फ़रमान है

" जो आदमी घर ही से जनाज़ा के साथ रहे (दूसरी रिवायत में है कि जो आदमी मुसलमान के जनाज़े के साथ

ईमान व सवाब की निय्यत से चले) यहाँ तक कि नमाज़ से फ़ारिग़ हो जाये, उस के लिये एक "क़ीरात" सवाब है, और जो दफ़्न तक साथ रहे उस के लिये दो क़ीरात सवाब है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से पूछा गया कि दो क़ीरात कितने होते हैं ? आपने फ़रमाया : दो बड़े पहाड़ों जितने (एक दूसरी रिवायत में है कि हर क़ीरात उहुद पहाड़ जितना होता है) (बुख़ारी, मुस्लिम, नसई)

४७ जनाज़े के साथ रहने का यह सवाब सिर्फ़ मर्दों के लिये है, औरतों के लिये नहीं। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने औरतों को जनाज़ा के साथ जाने से रोका है और यह रोकना "तन्ज़ीह" के तौर पर है (यानी अगर औरत न जाये तो सब से बेहतर है और चली गई तो गुनाह नहीं) हज़रत उम्मि अ़तिय्या रज़ि० बयान करती हैं :

" हमें जनाज़े के साथ जाने से रोका तो जाता था (एक रिवायत में है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने राका था) लेकिन सख़्ती से नहीं" (बुख़ारी, मुस्लिम)

४८ जिन चीज़ों को जनाज़े के साथ ले जाने से राका गया है उन्हें साथ ले जाना जायज़ नहीं, इस तरह की दो बातों के मुतअ़ल्लिक़ तो साफ़ हुक्म मौजूद है

(१) रोते हुये (जनाज़े के साथ) आवाज़ बुलन्द करना

(२) उस के साथ धूनी लेकर चलना

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हुक्म फ़र्माया है :

" जनाज़े के साथ आग और आवाज़ न जाये (अबू दावूद, मुस्नद अहमद)

४९ इसी तरह जनाज़े के आगे ऊंची आवाज़ से ज़िक्र *(बातें करना)* भी बिद्अ़त है। हज़रत क़ैस बिन उबादा रज़ि० बयान करते हैं :

" नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्ल्म के सहाबा

जनाज़ों के साथ ऊँची आवाज़ नापसन्द करते थे (सुनन् कुबरा बैहक़ी)

इन कामों से इसलिये भी बचना ज़रुरी है कि यह ईसाइयों से मुशाबेहत है, क्यों कि वह लोग इस मौक़ा पर बुलन्द और ग़मगीन आवाज़ से गा-गा कर इन्जील और दूसरे अज़्कार पढ़ते हैं। इस से भी कहीं बद-तर यह तरीक़ा है कि कुछ इस्लामी मुल्कों में काफिरों की नक़ल करते हुए ग़म की धुनें बजाई जाती हैं।

इमाम नववी रह० ने अपनी किताब "अल्-अज़कार" में लिखा है कि सहीह और सच्ची बात यह है कि जनाज़े के साथ बिल्कुल ख़ामोशी से चला जाये, जैसा कि सहाबा और दीगर बुज़ुर्गों का अ़मल था, कुरआन मजीद की तिलावत, ज़िक्र या किसी दूसरी चीज़ को बुलन्द आवाज़ से न पढ़ा जाये। इस की हिक्मत बिल्कुल साफ़ तौर पर ज़ाहिर है कि आदमी के ख़्यालात और सोच फ़िक्र ख़ामोश और इकट्ठा रहते हैं, वह जनाज़े और मौत के बारे में ग़ौर कर सकता है, और यही बात इसमौक़ा पर होनी चाहिये और यही सहीह है, इस हुक्म की मुख़ालिफ़त करने वालों से धोका नहीं खाना चाहिये। हज़रत अबू अली फ़ुज़ैल बिन अयाज़ रज़ि० फ़रमाते हैं :

"हिदायत की राह पर रहो, साथी कम भी हों तो भी परेशानी की कोई बात नहीं, गुमराही के रास्ते से दूर रहो और इस बात से धोखा न खाओ कि कितनी बड़ी तायदाद इस राह में बर्बाद हो रही है"

इस बात की ताईद क़ैस बिन उबादा के ऊपर ज़िक्र किये गये क़ौल से भी होती है

अल्बत्ता नादान लोग जो भी करते हैं चाहे वुह इस मौक़ा पर कुरआन पढ़ें या ज़िक्र करें, उम्मत का इस बात पर इत्तिफ़ाक़ है कि यह सब काम हराम हैं।

५० जनाज़ा तेज़ी से ले जाना चाहिये, उस को लेकर इस तरह चला

जाये जो दौड़ने से कम हो। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का हुक्म है :

> *" जनाज़ा जल्दी से ले जाओ, अगर नेक है तो एक बेहतर चीज़ को उस की जगह पहुँचा रहे हो, और अगर ऐसा नहीं (बुरा है) तो इस बुराई को अपनी गर्दनों से उतार दो गे" (बुख़ारी, मुस्लिम)*

मैं कहता हूँ कि अम्र सेग़ा से हुक्म वाजिब का दर्जा अख़्तियार कर लेता है। यही राय इमाम इब्ने हज़्म की है। किसी दलील से इस को मुस्तहब क़रार नहीं दिया जा सकता, इसी लिये इसी राय को हम ने अख़्तियार किया है। इमाम इब्ने क़य्यिम ने "ज़ादुल्-मआ़द्" में ईशाद फ़रमाया :

> *" इस ज़माना में लोग (जनाज़ा ले कर) क़दम-क़दम चलते हैं, यह बहुत बुरी बिद्अ़त है, इस में सुन्नत की मुख़ालिफ़त है और यहूदियों से मुशाबहत भी "*

८) जनाज़े के आगे पीछे, दायें-बायें हर तरफ़ चलना जायज़ है, इस शर्त के साथ कि क़रीब रहे। अल्बत्ता सवार पीछे ही रहे गा। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का ईशाद है :

> *" सवार जनाज़े के पीछे चले, पैदल चलने वाला जहाँ चाहे (आगे, पीछे, दायें, बायें इस शर्त के साथ कि क़रीब रहे) बच्चे के जनाज़ा की नमाज़ अदा की जाये और उस के माँ-बाप के हक़ में मग़्फ़िरत व रहमत की दुआ हो गी" (अबू दावूद, नसई, तिर्मिज़ी)*

५२ जनाज़े के आगे और पीछे चलना, दोनों सूरतें नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से साबित हैं, जैसा कि हज़रत अनस बिन मालिक रज़ि० से रिवायत है :

> *रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम, हज़रत अबू बक्र और हज़रत उमर रज़ि० जनाज़े के आगे चलते थे और पीछे भी" (तहावी)*

५३ जनाज़े के पीछे चलना बेहतर है, क्योंकि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के फ़रमान का यही तक़ाज़ा है। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया

" जनाज़ों के पीछे चलो" (इब्ने अबी शैबा)

५४ सवार होकर जाना जाइज़ है, बर्शते कि पीछे चले, जैसा कि रसूलुल्लाहा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के फ़र्मान से साबित है

" सवार होने वाला जनाज़ा के पीछे चले" (अबू दावूद, नसई वग़ैरह)

लेकिन पैदल चल कर जाना अफ़्ज़ल है, इस लिए कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का यही मामूल *(आम तरीक़ा)* था। सवार होकर जाना आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से साबित नहीं, बल्कि हज़रत सौबान रज़ि० बयान करते हैं :

" रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम एक जनाज़े के साथ जा रहे थे कि आप को सवारी पेश की गई लेकिन आप ने सवार होने से मना फ़रमा दिया, जब वापस हुए तो दो बारा सवारी पेश की गई तो आप सवार हो गये। जब आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मालूम किया तो फ़र्माया :" फ़रिश्ते पैदल चल रहे थे; उन के पैदल चलते हुये मुझे सवार होना गवारा न था, और जब वह चले गये तो मैं सवार हो गया"

(अबू दावूद, तिर्मिज़ी)

५५ जनाज़ा से वापसी पर सवार हो कर आना बिला कराहत जायज़ है, जैसा कि हज़रत सौबान की ऊपर वाली हदीस से साबित है। इसी तरह हज़रत जाबिर बिन समुरः रज़ि० बयान करते हैं:

" रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने मेरे सामने इब्ने दह्दाह की जनाज़ा की नमाज़ पढ़ाई (दूसरी रिवायत में हैं कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम इब्ने दह्दाह के जनाज़े के लिए पैदल निकले)

आप के लिए बग़ैर ज़ीन के घोड़ा पेश किया गया जिसे एक शख़्स ने थाम रखा था, वापसी पर आप उस पर सवार हो गये, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सवारी धीमे-धीमे चला रहे थे और हम आप के पीछे-पीछे दौड़ रहे थे (एक रिवायत में है कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया: " जन्नत में कितने फलों के ख़ोशे इब्ने दह्दाह् के लिए लटक रहे हैं) (मुस्लिम शरीफ़)

५६ जनाज़े को बक्तर-बन्द या मुंदा गाड़ी पर ले जाना और दफ़्नाने वालों को भी गाड़ियों में बैठ कर जाना, यह सूरत शरीअत में जायज़ नहीं। इसके निम्न लिखित कारण हैं :

१.) यह कुफ़्फ़ार की आ़दत है, और यह बात शरीअ़त से साबित है कि उनकी तक़्लीद जायज़ नहीं। इस सिलसिले में बहुत सी हदीसें मौजूद हैं जिन्हें हम ने अपनी किताब " हिजाबुल् मर्अतिल् मुस्लिमति फ़िल् किताबि वस्सुन्नति" में विस्तार से बयान किया है। चन्द एक में तो हुक्म मौजूद है कि कुफ़्फ़ार की इबादत, आ़दत, रस्म व रवाज की मुख़ालिफ़त की जाये, और चन्द एक से मालूम होता है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कुफ़्फ़ार की मुख़ालिफ़त फ़र्माई है। तफ़्सील उस किताब में देखें।

२.) जनाज़ा उठा कर ले जाने के मुक़ाबले में यह एक बिद्अत है, इस तरह की तमाम बिद्अत गुमराही हैं।

३.) जनाज़े को उठाने और उसके साथ चलने का मक़्सद " आख़िरत को याद दिलाना" ख़त्म हो जाता है जैसा कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का फ़र्मान इस फ़स्ल के शुरु में बयान हो चुका है कि:

" जनाज़ों के पीछे चलो, यह तुम्हें आख़िरत की याद दिलायें गे"

मैं कहता हूँ, इस सूरत में (गाड़ी पर) जनाज़ा ले जाने से सारा मक़्सद या उसका अक्सर हिस्सा फ़ौत हो जाता है। और यह बात भी पढ़े-लिखे लोग ख़ूब जानते हैं कि जनाज़े को गर्दन पर उठा कर ले जाने से और साथ में चलने वालों का उसे इस हाल में देखने से जो मौत की याद और नसीहत पैदा होती है, वह गाड़ियों में ले जाने से नहीं हो सकती, और मेरी इस बात में मुबालिग़ा नहीं है कि योरप वालों ने मौत के डर से, माद्दा परस्ती के रुजहान और आख़िरत के इन्कार की वजह से यह तरीक़ा अख़्तियार किया है।

४.) गाड़ी पर रख कर ले जाने से बहुत सारे लोग जनाज़ा के साथ जाने और बहुत बड़े सवाब से महरुम रह जाते हैं, क्यों कि हर आदमी गाड़ी का इन्तज़ाम कर के उस के साथ नहीं जा सकता।

५.) शरीअत ने जिस तरीक़े और अन्दाज़ को पसन्द फ़रमाया है इस के साथ उस तरीक़े का दूर या नज़दीक का कुछ भी तअ़ल्लुक नहीं और ख़ास कर मौत जैसे अहम मुआमले में। हक़ीक़त यह है कि अगर सिर्फ़ मुख़ालिफ़त की यही वजह होती है तब भी (काफ़िरों की तरह ले जाने का अमल) कुबूल नहीं किया जा सकता, कुजा यह कि इसमें बहुत सारी दूसरी बुराइयाँ भी पाईजाती हैं, जिन को मैं बयान नहीं कर रहा हूँ।

नोट :— मजबूरी की हालत में बेशक जायज़ है, जैसे शहरों में कब्रस्तान का काफ़ी दूर होना या और कोई जायज़ मजबूरी बग़ैरह)

५७ जनाज़े के लिये खड़ा होना मन्सूख़ है। इस की दो सूरतें हैं:

१.) जब जनाज़ा गुज़रे तो बैठे हुये आदमी खड़े हो जायें

२.) जब जनाज़ा क़ब्र तक पहुँचकर ज़मीन पर रख दिया जाये उस वक़्त तक साथ जाने वालों का खड़े रहना। इसकी दलील हज़रत अली रज़ि० की यह दलील है:

"रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम जनाज़े के लिए खड़े हुये तो हम भी खड़े हो गये, फिर आप. बैठ

गये तो हम भी बैठ गये" (दूसरी रिवायत में है कि) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम जनाज़े की ख़ातिर खड़े हो गये थे, फिर बाद में बैठना शुरु कर दिया" (तहावी)

एक दूसरी रिवायत में यूँ बयान हुआ है:

"रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने हमें जनाज़ा की ख़ातिर खड़े होने का हुक्म दिया था, बाद में आप ख़ुद भी बैठे रहे और हमें भी बैठने का हुक्म दिया।"

५७ "जो भी मय्यित उठाये उसे वज़ू कर लेना मुनासिब है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का ईशाद है:

"जो मय्यित को गुस्ल दे, उसे ख़ुद गुस्ल कर लेना चाहिये और जो उस को उठाये उसे भी वज़ू कर लेना चाहिये" (अबू दावूद)

नोट : तफ़्सील के लिये देखें मस्अला नं. ३१

जनाज़ा की नमाज़

५८ मुसलमान मय्यित की जनाज़ा की नमाज़ अदा करना "फ़र्ज़ किफ़ायह" है। इस सिलसिले में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का हुक्म कई हदीसों में है। हज़रत ज़ैद बिन ख़ालिद जुहनी रज़ि० से रिवायत है वह फ़रमाते हैं :

> *"अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के एक सहाबी ख़ैबर के दिन इन्तक़ाल कर गये, साथियों ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम से ज़िक्र किया, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़र्माया: अपने साथी के जनाज़े की नमाज़ अदा करो" इस हुक्म से लोगों के चेहरे उतर गये, आप ने इर्शाद फ़र्माया: "तुम्हारे साथी ने ग़नीमत के माल में ख़ियानत की है," जब हम ने उनके सामान की तलाशी ली तो यहूदियों का एक मोती निकला जिस की क़ीमत दो दिरहम भी नहीं थी" (मुअत्ता इमाम मालिक, अबू दावूद)*

५९ इस हुक्म में दो तरह के लोग शामिल नहीं हैं, उन की नमाज़ जनाज़ा अदा करना फ़र्ज़ नहीं:

१) **नाबालिग़ बच्चा**: इस लिए कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने अपने बेटे इब्राहीम की जनाज़ा की नमाज़ नहीं अदा की थी, हज़रत आइशा रज़ि० बयान फ़रमाती हैं

> *"रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बेटे इब्राहीम ने १८ माह की उम्र में वफ़ात पाई, आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उन की जनाज़ा की*

नमाज़ नहीं अदा फ़रमाई" *(अबू दावूद)*

नोट : लेकिन अगर बच्चे की जनाज़ा की नमाज़ पढ़ ली जाये तो कोई हरज नहीं।

२.) **शहीदः** *(इस की भी जनाज़ा की नमाज़ नही पढ़ी जायेगी)* रसूलुल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उहुद के शहीदों और दूसरे शहीदों की जनाज़ा की नमाज़ नहीं अदा फ़रमाई। *(इस के लिए मस्अला न० ३८ देखें)*

लेकिन इस से यह साबित नहीं होता कि इन दोनों *(बच्चा, शहीद)* पर जनाजा की नमाज़ पढ़ना साबित नहीं। हाँ, यह कहा जा सकता है कि "वाजिब" नहीं, जैसा कि नीचे के मस्अला में मौजूद है:

६० नीचे के लोगों की जनाज़ा की नमाज़ अदा करना सुन्नत से साबित है

१.) **बच्चाः** अगर्चे ना तमाम पैदा हुआ हो, (जैसा कि मस्अला न० ५० में बयान हुआ है) रिवायत यह है:

> *" बच्चे की नमाज़-जनाज़ा अदा की जायेगी (एक दूसरी रिवायत में नातमाम का लफ़्ज़ आया है) और उस के मां बाप के लिये मग़्फ़िरत की दुआ की जायेगी।"*
>
> *(अबू दावूद)*

और यह बात भी ज़ाहिर है कि "नातमाम" से मुराद वह बच्चा है जिस के चार माह पूरे हो चुके हों, और उस में रुह *(जान)* फूंक दी गई हो, फिर वफ़ात पाये। अल्बत्ता इस से पहले की सूरत में *(चार माह की मुद्दत से कम पैदाइश में)* नमाज़ अदा नहीं होगी, इस लिये कि वह मय्यित ही नहीं कहलाये गा। इस बात की वज़ाहत हज़रत अब्दुल्लाह बिन मस्ऊद रज़ि० की रिवायत से होती है, कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने ईशाद फ़रमाया:

> *"तुम्हारी पैदाइश का तरीक़ा कार यह है कि चालीस दिन तक वह माँ के पेट में नुत्फ़े की शक्ल में रहता है, फिर इतने (चालीस) ही दिन लोथड़े की शक्ल में,*

फिर इतने ही दिन बोटी की शक्ल में रहता है, फिर फ़िरिश्ता भेज दिया जाता है जो उस में रुह फूँकता है" (बुख़ारी, मुस्लिम)

२.) **शहीद** (की भी नमाज़ जनाज़ा अदा करना सुन्नत से साबित है) हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० से रिवायत है:

"रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने उहुद के दिन हज़रत हम्ज़ा रज़ि० को चादर से छुपा देने का हुक्म दिया, आप ने हज़रत हम्ज़ा की नौ तक्बीरों से जनाज़ा की नमाज़ अदा की, फिर दूसरे शहीद बारी-बारी लाये गये, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने उनकी भी नमाज़ अदा फ़रमाई और उन के साथ-साथ हज़रत हम्ज़ा की भी नमाज़ अदा, फ़रमाते रहे।" (मआ़नी अल्-आसार)

हज़रत उक़्बा बिन आ़मिर जुहनी रज़ि० बयान करते हैं कि एक दिन नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम उहुद तशरीफ़ ले गये, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उहुद के शहीदों की आठ साल के बाद नमाज़े जनाज़ा अदा फ़रमाई *(गोया कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ज़िन्दों और मुर्दों को रुख़्सत कर रहे थे)* फिर आप मिम्बर पर तशरीफ़ लाये और हम्द व सना के बाद फ़र्माया :

"मैं तुम से पहले जाने वाला हूँ, मैं तुम्हारा गवाह हूँ (अब मुलाक़ात हौज़े-कौसर पर होगी) अल्लाह की क़सम! इस वक़्त मैं अपने हौज़ को देख रहा हूँ उस की चौड़ाई 'ईला' से 'जुहफ़ा' तक है, मुझे ज़मीन के ख़ज़ानों की चाबियाँ दे दी गई हैं। अल्लाह की क़सम! मुझे अपने (चले जाने के) बाद तुम्हारे शिर्क का डर नही, अल्बत्ता दुनिया के बारे में डर ज़रुर है कि तुम

उस की दौड़ में लग जाओ (और इस बात का भी डर है कि तुम आपस में लड़ कर हलाक हो जाओ, जैसे तुम से पहले के लोग हलाक हुए थे) (रिवायत करने वाले (उक़्बा बिन आमिर) का बयान है कि मैं ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम को आख़री बार देखा)

३.) जिस मुसलमान को किसी "हद" की वजह से क़त्ल कर दिया जाये *(ऐसे शख़्स की भी जनाज़ा की नमाज़ पढ़ना शरीअत से साबित है)* हज़रत इम्राम बिन हुसैन रज़ि० बयान करते हैं :

"जुहैना क़बीले की एक औरत रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुई जो ज़िना की वजह से हमल से थी, उसने अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम से दर्ख़ास्त की कि मुझ से एक ऐसी ग़लती हो गई है जिस की वजह से मुझे हद लगनी चाहिये, इस लिए मुझ पर हद जारी करें। आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उस के सरपरस्त रिश्तेदार को बुला कर हुक्म दिया कि इस औरत के साथ अच्छा सुलूक करो, जब बच्चा पैदा हो जाये तो मेरे पास ले आना। चुनान्चे उस ने ऐसा ही किया, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हुक्म से उस के कपड़े अच्छी तरह से बाँध दिये, फिर आप के हुक्म से रज्म (पत्थरों से मार कर हलाक) कर दिया गया। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उस की जनाज़ा की नमाज़ अदा फ़रमाई। हज़रत उमर रज़ि० ने मालूम किया कि क्या आप एक ज़िना कार औरत की भी जनाज़ा की नमाज़ अदा फ़रमायें गे ? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़रमाया : "इस

ने तो ऐसी तौबा की है कि अगर मदीना के ७० लोगों में बांट दी जाये तो सब को काफ़ी कर जाये, सिर्फ़ अल्लाह के डर से जान दे देने वाली (इस औरत) से बैहतर किसी की तौबा तुमने देखी है ?"

४.) **ऐसा बुरा आदमी जो हर दम गुनाहों में डूबा रहता हो**: जैसे नमाज़ रोज़े को छोड़ देने वाला, इस र्शत पर कि उसे वाजिब समझता हो, ज़ानी, शराबी और ऐसे ही दूसरे गुनाह-गार इन सब की नमाज़ जनाज़ा अदा की जायेगी। अल्बत्ता मुत्तक़ी प्रहेज़ गार, नेक लोगों को सज़ा के तौर पर (ऐसे शख़्स की) जनाज़ा की नमाज़ नहीं अदा करनी चाहिये, ताकी दूसरों को नसीहत हो जैसा कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने किया । इस बारे में बहुत सारी हदीसें हैं, र्सिफ़ एक हदीस बयान की जाती है। हज़रत अबू क़तादा रज़ि० बयान फ़रमाते हैं :

"जब नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से किसी जनाज़ा की नमाज़ अदा करने की दर्ख़ास्त की जाती तो आप उस के बारे में मालूमात करते अगर लोग (उस के बारे में) अच्छा ख़्याल ज़ाहिर करते तो नमाज़ अदा र्फ़मा देते, और अगर उस के तअल्लुक़ से अच्छी राय न होती तो उस के घर वालों से फ़रमाते " खुद ही पढ़ लो" और आप खुद नमाज़ न अदा करते"
(मुस्नद अहमद, मुस्तदरक हाकिम)

५.) **ऐसा क़र्ज़-दार जो इतना माल न छोड़े जिस से क़र्ज़ अदा हो सके** : उसकी नमाज़ जनाज़ा की नमाज़ अदा की जाये गी। रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने सिर्फ़ शुरु में नमाज़ जनाज़ा छोड़ी थी हज़रत सल्मा बिन अकवा रज़ि० बयान करते हैं:

"हम लोग रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के पास मौजूद थे कि इतने में एक जनाज़ा आया, उन्हों

ने आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम से जनाज़े की नमाज़ अदा करने की दर्ख़ास्त की, आप ने पूछा कि क्या वह क़र्ज़ दार है ? उन्होंने ने कहा नहीं, चुनान्चे आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने उस की जनाज़ा की नमाज़ अदा फ़रमाई। फिर एक दूसरा जनाज़ा आया, उन्हों ने भी आप से नमाज़ अदा करने की दर्ख़ास्त की, आप ने पूछा: क्या वह क़र्ज़दार है ? जवाब मिला हाँ, आप ने फिर पूछा: क्या कुछ माल वग़ैरा छोड़ा है? बताया गया सिर्फ़ तीन दीनार। रिवायत करने वाले (सल्मा बिन अकवा) कहते हैं कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने तीन बार अपनी उंग्लियों से इशारा करके फ़र्माया: "इसके लिये तीन दाग़ हैं" फिर नमाज़े जनाज़ा अदा फ़र्माई। फिर तीसरा जनाज़ा आया, उन्हों ने भी अदा करने की दर्ख़ास्त की, आप ने पूछा: क्या माल छोड़ा है ? लोगों ने बताया कुछ नहीं, फिर पूछा क्या यह क़र्ज़ दार है? लोगों ने कहा तीन दीनार, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़र्माया: "अपने साथी की नमाज़ अदा करो।" हज़रत अबू क़तादा ने कहा: आप जनाज़ा की नमाज़ पढ़ा दें, क़र्ज़ मैं अदा कर दूँगा। (बुख़ारी)

हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० बयान करते हैं:

"रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के पास ऐसा जनाज़ा भी आता था जिस के ऊपर क़र्ज़ होता था, आप पूछ लेते थे कि क्या क़र्ज़ कि आदायगी जितना माल छोड़ा है? अगर जवाब मिलता कि उतना छोड़ा है, तो आप नमाज़े जनाज़ा अदा फ़रमाते, वर्ना नहीं, और कह देते कि अपने इस साथी की जनाज़ा की नमाज़

अदा कर लो। जब अल्लाह तआला ने जन्गों में कामियाबी अता फ़रमाई तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया: मैं दुनिया व आख़िरत में मोमिन की ज़ात पर भी मुक़द्दम हूँ, अगर पसन्द करो तो अल्लाह का यह फ़र्मान पढ़ लो "बेशक नबी तो ईमान वालों के लिये उन की अपनी ज़ात पर मुक़द्दम है" जो क़र्ज़-दार वफ़ात पाये और उस के अदा करने के लिये माल भी न छोड़े तो (उस की) अदायगी की ज़िम्मे दारी मुझ पर है, और जो माल छोड़ कर मरे, वह माल उस के वारिसों का है" (बुख़ारी, मुस्लिम)

६.) **जिस की जनाज़ा की नमाज़ अदा किये बग़ैर दफ़्न कर दिया जाये या सिर्फ़ चन्द लोगों ने ही नमाज़ अदा की हो,** इस सूरत में उस की क़ब्र पर ही नमाज़े जनाज़ा अदा करें। दूसरी सूरत में शर्त यह भी है कि इमाम उस की नमाज़े जनाज़ा में शामिल न हुआ हो। इस मस्अले के तअल्लुक़ से बहुत सारी रिवायतें मौजूद हैं। हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि० रिवायत करते हैं:

"एक सहाबी की वफ़ात हो गई जिन की रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम अयादत फ़रमाया करते थे सहाबा ने उन्हें रात ही में दफ़्न कर दिया, दूसरे दिन सहाबा ने आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम को ख़बर की तो आप ने कहा कि मुझे क्यों नहीं बताया ? सहाबा ने कहा कि रात का वक़्त था और अंधेरा भी था इस लिये आप को तक्लीफ़ देना पसन्द न किया। आप उन की क़बर पर आये और नमाज़े जनाज़ा अदा फ़र्माई, हम सब ने आप के पीछे सफ़ बाधी (इब्ने अब्बास रज़ि० कहते हैं कि मैं ख़ुद भी था) आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने चार तक्बीरें कहीं" (इब्ने माजा)

७.) **कोई मुसलमान ऐसी जगह मर जाये जहाँ किसी ने उस की जनाज़ा की नमाज़ न पढ़ाई हो,** ऐसे आदमी पर कुछ मुसलमान जनाज़ा गाइबाना अदा कर लें, जैसा की रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने नजाशी की नमाज़ जनाज़ा अदा फ़रमाई थी। इस मस्अले के तअल्लुक़ से बहुत सारी रिवायतें मौजूद हैं उन की निचोड़ यह है, हज़रत अबू हरैरा रज़ि० बयान करते हैं कि:

रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने हब्शा के बादशाह "अस्हमा" का जिस रोज़ इन्तेक़ाल हुआ उसी रोज़ ख़बर दे दी और फ़रमाया कि तुम्हारा भाई फ़ौत हो चुका है (एक दूसरी रिवायत में है कि अल्लाह का नेक बन्दा फ़ौत हो गया, वह इस इलाक़े में नहीं रहता, उठो और उसकी जनाज़े की नमाज़ अदा करो) सहाबा ने पूछा कि वह कौन है ? फ़र्माया : नजाशी, (और यह भी फ़र्माया अपने भाई के लिए मग़्फ़िरत की दुआ करो) आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ जनाज़ा गाह गये (दूसरी रिवायत में है कि "बक़ीअ" गेय) आप आगे बढ़े, सहाबा ने पीछे दो सफ़ें बनायीं (रावी कहते हैं कि हम ने बिल्कुल ऐसे ही सफ़ें बनायीं जैसे मौजूद मय्यित के लिए सफ़ें बनाई जाती हैं और इस तरह नमाज़ अदा की जैसे मय्यित के लिए अदा की जाती है) (हमें ऐसा महसूस हो रहा था गोया जनाज़ा आगे रखा हुआ है,) आप ने हमारी इमामत करते हुये नमाज़ अदा की) और चार तक्बीरें कहीं किसी ने मालूम किया कि आप हब्शी की भी नमाज़ अदा करते हैं ? चुनान्चे इस मौक़े पर यह आय: नाज़िल हुई:

व–इन्न मिन अह्लिल किताबि ल–मय्युअ् मिनु बिल्लाहि

"और बेशक एहले किताब में ऐसे भी हैं जो ईमान ले आये अल्लाह पर" (बुख़ारी, मुस्लिम, नसई)

६१ काफ़िर, मुश्रिक और मुनाफ़िक़ की नमाज़ जनाज़ा अदा करना और उन के लिए मग़्फ़िरत की दुआ करना हराम व ना जायज़ है। अल्लाह तआला का हुक्म है :

"और आइन्दा उन में से जो मरे उस के *जनाज़ा की नमाज़ भी तुम हर्गिज़ न पढ़ना और न कभी उन की क़ब्र पर खड़े होना, क्यों कि उन्हों ने अल्लाह और उस के रसूल के साथ कुफ़्र किया है, और वह इस हाल* में मरे हैं कि फ़ासिक़ थे" *(सूर :तौबा, ८४)*

हज़रत अली रज़ि० बयान फ़रमाते हैं कि मैं ने एक साहब को अपने मुश्रिक माँ-बाप के लिए मग़्फ़िरत की दुआयें करते देखा तो मैं ने कहा "तुम अपने मुश्रिक माँ-बाप के लिए दुआ कर रहे हो" उन्हों ने जवाब दिया "क्या हज़रत इब्राहीम अलै० ने अपने मुश्रिक माँ-बाप के लिए दुआ नहीं की थी ? "चुनान्चे मैं ने इस बात का ज़िक्र रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से किया, तो यह आय: नाज़िल हुई :

"मा का–न लिन्नबिय्यि वल्लज़ी न आ–मनू"

(सूर:तौबा, ११३) (नसई)

इमाम नववी रह० "किताबुल्-मज्मूअ़" में फ़रमाते हैं कि क़ुरआन और मुत्तफ़िक़ा दलीलों से काफ़िरों की जनाज़ा की नमाज़ अदा करना, या उनके लिए मग़्फ़िरत करना हराम है।

इस मौक़ा पर मुसलमानों की ग़लती ज़ाहिर हो जाती है जो काफ़िरों को "रह०, रज़ि०" कहते हैं। आम तौर पर यह ग़लती अख़्बार और पर्चों वाले करते है।

मैं ने सुना है कि एक अरबी सबराह "इस्टालन" को "रह०" कहता है जब कि सभी जानते हैं कि वह कम्यूनिस्ट था, वह और उस का दीन, इस्लाम का सब से बड़ा दुश्मन है, यह बात इस्टालन की मौत के मौक़ा पर उस ने तक़रीर करते हुई कही, यह तक़रीर रेडियो से भी जारी की गई। यह भी कोई ताज्जुब की बात नहीं कि उस

सरबराह को अल्लाह का यह फ़रमान मालूम ही न हो, लेकिन ताज्जुब की बात तो यह है कि एक मुसलमान आलिमे दीन ऐसी हरकत करे, उन्हों ने अपने एक ख़त में लिखा

" रहि महुल्लाह बर्नाड शा " *(अल्लाह बर्नाड शा पर रहम करे)*

मुझे मेरे एक दोस्त ने बताया कि कुछ उलमा इस्माईलियों *(एक फ़िर्क़ा का नाम)* की भी नमाज़े जनाज़ा अदा करते हैं, जब कि वह यह भी जान्ते हैं कि "इस्माईली" ग़ैर मुस्लिम हैं, इसलिये कि इन के यहाँ नमाज़ और हज नहीं है और वह अपने इमाम की पूजा करते हैं। (अल्लाह इन लोगों की हालत पर रहम करे)

६२ नमाज़े जनाज़ा की जमाअत भी इसी तरह ज़रुरी है जैसे दूसरी फ़र्ज़ नमाज़ों की जमाअत ज़रुरी है। इस के लिए निम्न-लिखित दलीलें हैं।

१.) नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हमेशा इसी तरह (जमाअत के साथ) नमाज़ पढ़ी है।

२.) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का हुक्म है:

"इसी तरह नमाज़ को पढ़ो जिस तरह मुझे नमाज़ अदा करते देखते हो" (बुख़ारी)

इस बात से अस्ल मस्अला में कोई फ़र्क़ नहीं आता कि सहाबा ने रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की नमाज़े जनाज़ा अकेले-अकेले अदा की है, किसी ने जमाअ़त नहीं कराई, क्योंकि वह एक ख़ास मुआ़मला था इस की हक़ीक़त का कोई इल्म नहीं, इस लिए ऐसा अमल नहीं छोड़ा जा सकता जिसे रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ज़िन्दगी भर किया हो। ख़ास तौर पर इस मामले में कोई सहीह हदीस नहीं है जो दलील बन सके, अगर्चे कई एक रिवायतों में जो एक दूसरी की ताईद करती हैं। अगर ऊपर बयान किये गये मस्अले और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नत में तत्बीक़ की

सूरत बन जाये तो बेहतर, वर्ना रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की मुबारक सुन्नत पर अ़मल किया जायेगा, इसलिये कि वह सनद के एतबार से साबित और हिदायत का ज़रीआ है।

अगर मुसलमान अकेले -अकेले नमाज़े जनाज़ा पढ़ लें तो फ़र्ज़ तो अदा हो जाये गा, अल्बत्ता जमाअत के साथ अदा न करने का गुनाह होगा। इमाम नववी रह० "अल्-मज्मूअ़" में लिखते हैं:

" अकेले नमाज़ पढ़ लेने से जनाज़ा तो अदा हो जाये गा, और इस में कोई इख़्तिलाफ़ भी नहीं, अल्बत्ता सुन्नत यह है कि नमाज़ जनाज़ा जमाअ़त के साथ अदा की जाये जैसा कि सहीह और मश्हूर हदीसों से साबित है और इसी बात पर मुसलमानों का "इज्माअ़" (इत्तिफ़ाक़) है।" (अल मजमुअ़ ५/३१४)

६३ जमाअत कम से कम तीन आदमियों से हो सके गी। हज़रत अब्दुल्लाह बिन अबू तल्हा रज़ि० बयान करते हैं :

"हज़रत तल्हा ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को अपने बेटे हज़रत उमैर की वफ़ात के मौक़े पर बुला भेजा, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तश्रीफ़ लाये और उनके घर ही में जनाज़ा की नमाज़ अदा फ़रमाई। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम सब से आगे खड़े हुये, हज़रत तल्हा आप के पीछे और उम्मे सुलैम हज़रत तल्हा के पीछे (खड़ी हुयीं) इन के अलावा और कोई साथ न था"

(मुस्तदरक हाकिम)

६४ जनाज़े में जितने ज़्यादा लोग शामिल हों गे उतना ही बेहतर है। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का ईशाद है:

"जिस मय्यित के हक़ में मुसलमान जमाअत में से सौ आदमी सिफ़ारिश करें गे तो उन की शफ़ाअ़त

क़ुबूल होगी" (दूसरी रिवायत में है कि उस मय्यित की बख़्शिश हो जाय गी) (मुस्लिम)

इस से कम तायदाद पर भी मुर्दे की बख़्शिश हो सकती है, लेकिन शर्त यह है कि सारे मुसलमान तौहीद परस्त हों, उन में शिर्क न हो। रसूले अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का फ़रमान है :

" जो मुसलमान वफ़ात पा जाये उस के जनाज़े में चालीस ऐसे आदमी शरीक हों जो शिर्क न करते हों तो अल्लाह तआला उन की सिफ़ारिश क़ुबूल कर लेता है।" (मुस्लिम)

६५ मुनासिब यह है कि इमाम के पीछे तीन या इस से ज़्यादा सफ़ें बनायें। इस सिलसिले में दो हदीसें हैं जिन्हें इकट्ठा करने से मस्अला साबित हो जाता है। *(देखें, नैलुल् औतार)*

६६ अगर इमाम के साथ सिर्फ़ एक ही आदमी हो तो वह आम नमाज़ों की तरह इमाम के बग़ल में न खड़ा हो, बल्कि इमाम के पीछे खड़ा हो, (जैसा कि मस्अला न० ६३ में बयान हुआ है।)

६७ अमीरे वक़्त या उस का नायब क़रीबी रिश्ते दार से भी ज़्यादा जनाज़े की इमामत का हक़ रखता है। हज़रत अबू हाज़िम रज़ि० रिवायत करते हैं :

"जिस दिन हसन बिन अ़ली रज़ि० ने वफ़ात पाई तो मैं मौजूद था, मैं ने हज़रत हुसैन बिन अ़ली रज़ि० को देखा कि वह हज़रत सईद बिन आ़स की गर्दन में चोका लगा कर कह रहे थे, आगे बढ़ कर नमाज़ पढ़ाओ, अगर यह सुन्नत न होता तो तुम्हें कभी आगे न करता (सईद बिन आ़स मदीना के गवर्नर थे, और हुसैन और सईद के दर्मियान कुछ ग़लत फ़हमी थी)

(मुस्तदरक हाकिम)

६८ अगर अमीर या उस का नायब मौजूद न हो, तो फिर क़ुरआन

मजीद को बेहतर पढ़ने वाला ज़्यादा हक़-दार है, फिर इसी तर्तीब से जो रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के नीचे के फ़र्मान से साबित है :

"अच्छा क़ुरआन पढ़ने वाला लोगों का इमाम बने, अगर क़ुरआन पढ़ने में सब बराबर हों तो सुन्नत को ज़्यादा जानने वाला। अगर सुन्नत जानने में सब बराबर हों तो पहले हिजरत करने वाला, और हिजरत करने में भी बराबर हों तो सब से पहले इस्लाम लाने वाला कोई आदमी किसी दूसरे आदमी के अख़्तियार के दाइरे में इमामत न करे, और किसी के घर में ख़ुसूसी जगह पर उस की इजाज़त के बग़ैर न बैठे" (मुस्लिम)

नोट : उम्दा क़ुरआन पढ़ने वाला इमामत का ज़्यादा हक़दार है, अगर्चे नाबालिग़ बच्चा ही क्यों न हो। हज़रत अमर बिन सल्मा रज़ि० बयान करते हैं :

" मेरा ख़ान्दान नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ, जब वापस होने लगा तो उन्हों ने मालूम किया कि ऐ अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम! हमारा इमाम कौन होगा? आप ने फ़रमाया : " तुम में से क़ुरआन जिसे ज़्यादा याद हो," पूरे ख़ान्दान में मुझ से ज़्यादा किसी को क़ुरआन याद न था, इस लिए मुझे ही नमाज़ में आगे किया, जब कि मैं बच्चा था और मैं ने चादर ओढ़ रखी थी। क़बीला "जर्म" के जिस इज्तिमाअ (जल्सा) में मैं होता, इमाम बनता और आज तक उन के जनाज़े भी पढ़ा रहा हूँ" (अबू दाऊद)

६६ जब मर्दों और औरतों के जनाज़े इकट्ठे हो जायें तो उन सब पर एक ही मर्तबा जनाज़ा की नमाज़ अदा की जायगी। मर्दों के जनज़ा

को इमाम के क़रीब *(चाहे वह बच्चा ही हो)* और औरतों के जनाज़े को क़िब्ला की तरफ़ *(मर्द से आगे)* रखा जाये गा। यही रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का तरीक़ा है, जैसा कि हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० से हज़रत नाफ़ेअ़ ने नक़ल किया है :

> *" उन्हों ने नौ जनाज़ों की एक साथ नमाज़ जनाज़ा अदा की, मर्दों को इमाम की तरफ़ और औरतों को क़िब्ला की तरफ़ एक ही सफ़ में रख दिया। हज़रत उमर रज़ि० की बीवी उम्मे कुल्सूम और उन के बेटे ज़ैद का जनाज़ा एक साथ ही रखा गया, उन दिनों सईद बिन आ़स मदीने के अमीर थे, मौजूद लोगों में अब्दुल्लाह बिन अब्बास, अबू हूरैरा, अबू सईद और क़तादा वग़ैरह मौजूद थे। बच्चे को इमाम की तरफ़ रखा गया, एक साहब ने एतराज़ किया और मैं ने भी इसे अच्छा न जाना, आख़िर में इब्ने अब्बास, अबू हूरैरा, अबू सईद और क़तादा की तरफ़ देख कर कहा कि यह कैसे है ? (बच्चा इमाम के पास और माँ को उस के बाद) कहने लगे कि यही रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लहि वसल्लम का तरीक़ा है"*
>
> *(नसई शरीफ़)*

७० हर जनाज़े पर अलग-अलग नमाज़ अदा करना भी जायज़ है, इस के लिए अस्ल यही है और इसलिये भी कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उहुद के शहीदों की जनाज़ा की नमाज़ अलग-अलग अदा फ़रमाई (जैसा कि मस्अला न० ६० में बयान हुआ है।)

७१ नमाज़ जनाज़ा मस्जिद में भी अदा करना जाइज़ है। हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि० बयान करती हैं कि जब सअद् बिन अबी वक़्क़ास रज़ि० की वफ़ात हुई तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की बीवियों ने पैग़ाम भेजा कि उन की मय्यित मस्जिद में लेकर जायें

ताकि हम सब भी जनाज़ा की नमाज़ अदा कर सकें, सहाब-ए-किराम ने ऐसा ही किया, उन के जनाज़े को कमरों के सामने रख दिया गया, उन्हों ने नमाज़ अदा की, फिर उन्हें चबूतरे के पास वाले दर्वाज़े से निकाला गया, बाद में मालूम हुआ कि कुछ लोगों ने इस अमल को पसन्द नहीं किया और कहते हैं कि यह बिदअ़त है, क्योंकि जनाज़े मस्जिद में नहीं लाये जाते, यह बात हज़रत आइशा को मालूम हुई तो उन्हों ने कहा :

> *"जिस बात का लोगों को इल्म नहीं होता कितनी जल्दी उसपर एतराज़ कर बैठते हैं, हमारे बारे में यह एतराज़ है कि जनाज़ा मस्जिद में क्यों लाया गया? अल्लाह की क़सम! सुहैल बिन बैज़ा और उन के भाई का जनाज़ा बीच मस्जिद में अदा किया गया था"*
>
> *(मुस्लिम, अबू दावूद, तिर्मिज़ी)*

७२ अफ़्ज़ल व बेहतर यही है कि नमाज़ जनाज़ा मस्जिद से बाहर जनाज़ा गाह में अदा की जाये, जैसा कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के ज़माने में आम तरीका था, आम तौर पर यही बात रसूलुल्ललाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की सुन्नत से साबित है। इस तअल्लुक़ से कई हदीसें हैं (जो अस्ल किताब में देखी जा सकती हैं।) एक हदीस में है :

> *" आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम नजाशी (हब्शा का बादशाह) की नमाज़ बक़ीअ़ के क़रीब जनाज़ा गाह में पढ़ाई" (देखें, मस्अला न० ६०/७)*

एक दूसरी हदीस में है :

> *" यहूदी अपनी क़ौम के एक मर्द और एक औरत को लेकर नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुये, उन दोनों ने ज़िना किया था, चुनान्चे उन्हें मस्जिद के पास जनाज़ा गाह के क़रीब*

रज्म कर दिया गया" (बुख़ारी)

हाफ़िज़ इब्ने हजर रह० ने बुख़ारी शरीफ की शरह "फ़त्हुल बारी" में लिखा है कि जनाज़ा गाह मस्जिद के पूरब तरफ़ बिल्कुल ही करीब थी" (फ़त्हुल बारी) और एक दूसरी जगह फ़रमाया : "जिस जगह ईद की नमाज़ और नमाज़े जनाज़ा अदा की जाती थी, वह जगह " बक़ीउल्ग़रक़द " की तरफ़ थी। *(फ़त्हुल बारी)*

७३ क़ब्रों के दर्मियान जनाज़ा रख कर नमाज़ अदा करना जायज़ नहीं। हज़रत अनस बिन मालिक रज़ि० बयान फ़रमाते हैं:

"रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने क़ब्रों के दर्मियान नमाज़-जनाज़ा अदा करने से मना फ़रमाया है"

(मुस्नद अनस बिन मालिक) (अल-अहादीसुल्-मुख़्तारह)

हज़रत अनस रज़ि० से एक और रिवायत है :

"रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम क़ब्रस्तान में मस्जिद बनाने को ना पसन्द फ़रमाते थे"

(मुसन्निफ़ इब्ने शैबा)

इस बात की ताईद रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के इर्शाद से भी होती है जिस में आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने क़ब्रों को मज्दा गाह बनाने से मना फ़रमाया है। इस सिलसिले में जो कुछ नक़ल हुआ है मैं ने अपनी किताब " तहज़ीरुस्साजिद मिन् इत्तिख़ज़िल् क़ुबूरि मसाजिद" में नक़ल कर दिया है, इस का कुछ हिस्सा मस्अला न० १२६ में बयान करूँगा।

७४ नमाज़े जनाज़ा पढ़ाते हुये इमाम मर्द के सर के बराबर और औरत के बीच में खड़ा होगा। इस बारे में दो हदीसें हैं, सब से ज़्यादा साफ़ रिवायत अबू ग़ालिब ख़ैयात की है, वह फ़रमाते हैं:

" मेरे सामने हज़रत अनस बिन मालिक ने एक मर्द की जनाज़ा की नमाज़ *अदा की तो उस के सर के*

बराबर खड़े हुये, ज़ब यह जनाज़ा चला गया तो थोड़ी देर के बाद किसी कुरैशी या अन्सारी औरत का जनाज़ा आ गया, तो कहा गया कि ऐ अबू हम्ज़ा (हज़रत अनस की कुन्नीयत) यह फ़लाँ बिन्त फ़लाँ का जनाज़ा है इस की भी जनाज़ा की नमाज़ अदा कर दें, हज़रत अनस ने उसकी जनाज़ा पढ़ी तो उसके दर्मियान खड़े हुये। (एक दूसरी रिवायत में है कि उसकी कमर के बरारब, और उस पर हरे रन्ग का कपड़ा था) इस मौक़े पर उला बिन ज़ियाद अल-अददी भी मौजूद थे जब उन्होंने मर्द और औरत के जनाज़ा में फर्क़ देखा तो पूछा "ऐ अबू हम्ज़ा! क्या रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम भी ऐसे ही खड़े होते थे जिस तरह आप मर्द औरत के लिये खड़े होते हैं? हज़रत अनस रज़ि० ने जवाब दिया, "हां, हज़रत उला ने हमारी तरफ़ मुहं करके कहा "यह बात याद कर लो"

(अबू दावूद, तिर्मिज़ी)

नमाज़े जनाज़ा का तरीक़ा

७५ जनाज़ा की नमाज़ चार या पाँच तकबीरों से लेकर नौ तकबीरों तक पढ़ी जा सकती है। हर तरीक़ा नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम से साबित है, जिस तरह भी पढ़ ले, जायज़ है। बेहतर तरीक़ा यह है कि मुख़्तलिफ़ अन्दाज़ से पढ़े, कभी एक तरीक़े से जैसा कि ऐसे मुआमलात में होना चाहिये। मसलन, नमाज़ के शुरु की दुआयें, तशह्हुद के अल्फ़ाज़, दरुदे इब्राहीमी के अल्फ़ाज़। और अगर सिर्फ़ एक ही तरीक़ा अपनाना हो तो चार तक्बीरों वाला अपनायें इस लिए कि इस तरीक़ा *(चार तक्बीरों के साथ जनाज़ा की नमाज़)* के तअ़ल्लुक़ से हदीसें ज़्यादा और क़वी हैं। मुक़्तदी भी उतनी तक़्बीरें कहें जितनी इमाम कहे। तफ़्सील अस्ल किताब में देखें।

७६ सिर्फ़ पहली तक्बीर के साथ अपने हाथ उठाये, यही हदीस से साबित है। इस बारे में दो हदीसें हैं जो एक दूसरे को तक़्वियत देती हैं, और इसी बात पर उलमा का इत्तिफ़ाक़ है।

७७ फिर अपने हाथों को सीने पर इस तरह बाधें कि दायाँ हाथ बायें हाथ की हथेली, पहुँचा और कलाई तक आजाये। इस सिलसिले में कई मशहूर हदीसें हैं जो अस्ल किताब में देखी जा सकती हैं। नाफ़ के नीचे हाथ बांधने वाली हदीस "ज़ईफ़" है, जैसा कि इमाम नववी और इमाम ज़ैलई हनफ़ी रह० और दूसरे उलमा ने कहा है।

७८ पहली तक्बीर के बाद सूर: फ़ातिहा और इस के बाद कोई दूसरी सूर: पढ़े, जैसा कि हज़रत तल्हा बिन औ़फ़ की हदीस में है, वह फ़रमाते हैं:

> *"मैंने हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ि० की इमामत में जनाज़ा की नमाज़ अदा की, उन्होंने सूर:*

फ़ातिहा (और एक दूसरी सूर: बुलन्द आवाज़ से पढ़ी यहाँ तक कि हमें सुनाई। जब नमाज़ से फ़ारिग़ हुये तो मैंने उन का हाथ थाम कर पूछा) उन्हों ने जवाब दिया कि (मैं ने सिर्फ़ इस लिए बुलन्द आवाज़ से पढ़ा था) ताकि तुम्हें मालूम हो जाये कि यह सुन्नत है (और ज़रुरी है) (बुख़ारी, नसई)

७९ जनाज़ा की नमाज़ बुलन्द आवाज़ से न पढ़े। इस की दलील हज़रत अबू उमामा बिन सह्ल रज़ि० की रिवायतहै जिस में वह फ़रमाते हैं:

"नमाज़े जनाज़ा में सुन्नत यह है कि पहली तक्बीर के बाद सूर: फ़ातिहा आहिस्ता पढ़े, फिर तीन तक्बीर कहे और आख़िर पर सलाम फेर दे" (नसई)

८० फिर दूसरी तक्बीर कह कर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम पर दरुद पढ़ें, जैसा कि हज़रत अबू उमामा की ऊपर की हदीस में है कि उन्हें एक सहाबी रज़ि० ने बताया:

"नमाज़े जनाज़ा में सुन्नत यह है कि इमाम पहली तक्बीर कह कर अपने दिल में सूर: फ़ातिहा पढ़े, फिर नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम पर दरुद पढ़े, और तीन तक्बीरों में जनाज़े के लिये दुआ करे, इस बीच में कुरआन न पढ़े, फिर दायें तरफ़ मुड़ कर सलाम फेर दे। और यह भी सुन्नत है कि मुक़्तदी भी वह कुछ करे जो इमाम करता है"

(किताबुल उम्म, बैहक़ी)

जनाज़ा की नमाज़ में दरुद के लिये कोई ख़ास अल्फ़ाज़ सहीह अहादीस से साबित नहीं हैं, इस लिये मालूम यह हुआ कि जनाज़े के लिये किसी ख़ास अल्फ़ाज़ से दरुद नहीं पढ़ा जाये गा, बल्कि जो अल्फ़ाज़ तशह्हुद के बाद अदा किये जाते हैं वही पढ़े जायेंगे।

८१ फिर बाक़ी तक्बीरें अदा करें और मुर्दे के लिये दुआ करें, जैसा

कि हज़रत अबू उमामा की ऊपर बयान की हदीस में बयान की गई। आप सल्लल्लाहु अ़लहि वसल्लम ने यह भी फ़रमाया:

“अब तुम मुर्दे की नमाज़े जनाज़ा पढ़ो तो बड़े खुलूस से दुआ करो (अबू दावूद)

८२) जो दुआयें रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम से साबित हैं वह पढ़े उन में से मुझे चार दुआयें मालूम हो सकी हैं

اَللّٰهُمَّ اغْفِرْلَهٗ وَارْحَمْهُ وَعَافِهٖ وَاعْفُ عَنْهُ وَاَكْرِمْ نُزُلَهٗ،
وَوَسِّعْ مَدْخَلَهٗ، وَاغْسِلْهُ بِالْمَاءِ وَالثَّلْجِ وَالْبَرَدِ وَنَقِّهٖ مِنَ
الْخَطَايَا كَمَا نَقَّيْتَ الثَّوْبَ الْاَبْيَضَ مِنَ الدَّنَسِ،
وَاَبْدِلْهُ دَارًا خَيْرًا مِنْ دَارِهٖ وَاَهْلًا خَيْرًا مِنْ اَهْلِهٖ
وَزَوْجًا خَيْرًا مِنْ زَوْجِهٖ، وَاَدْخِلْهُ الْجَنَّةَ، وَاَعِذْهُ مِنْ
عَذَابِ الْقَبْرِ، وَمِنْ عَذَابِ النَّارِ.

पहली दुआ:— अल्ला हुम्मग़् फ़िर् लहू—वर्हम्हु, व आफ़िही वअ़्फु अ़न्हु व अक्रिम नुज़ु—लहु व वस्सेअ़् मद्ख़—लहू, वग़् सिल्हु बिल् माइ वस्सल्जि बल् ब—रदि, व नक़्क़िही मिन् ख़ताया कमा नक़्क़ै—तस्सौबल् अब्—य—ज़ मिनद्—द—नसि, व अब् दिल्हु दा—रन् ख़ैरम् मिन् दारिही, व अह्—लन् ख़ैरम् मिन् अह्लिही, व ज़ौजन् ख़ै—रम् मिन् ज़ौजिही व अद् ख़िल्हुल् जन्न—त, व अइज़्हु मिन् अ़—ज़ाबिल् क़ब्रि, व मिन् अ़—ज़ाबिन्—नारि

ऐ अल्लाह! उस को बख़्श दे, उस पर रहमत फ़र्मा, उस से दर-गुज़र कर के माफ़ कर दे, उस की मेहमानी

अच्छी फ़र्मा, उस के रहने की जगह (क़ब्र) को कुशादा कर दे, उस को पानी, बर्फ़ और ओलों से धो दे, उसे कोताहियों से इस तरह माफ़ कर दे जैसे सफ़ेद कपड़ा मैल से साफ़ किया जाता है, उस को उस के पहले घर से बेहतर घर दे, और उस के अज़ीज़ों से बेहतर अज़ीज़ और उसके साथी से बेहतर साथी दे, और उस को अज़ाब से हिफ़ाज़त फ़र्मा कर उसे जन्नत में दाख़िल कर दे (मुस्लिम, नसई)

اَللّٰهُمَّ اغْفِرْ لِحَيِّنَا وَمَيِّتِنَا وَشَاهِدِنَا وَغَائِبِنَا وَصَغِيْرِنَا وَكَبِيْرِنَا، وَذَكَرِنَا وَاُنْثَانَا، اَللّٰهُمَّ مَنْ اَحْيَيْتَهٗ مِنَّا فَاَحْيِهٖ عَلَى الْاِسْلَامِ وَمَنْ تَوَفَّيْتَهٗ مِنَّا فَتَوَفَّهٗ عَلَى الْاِيْمَانِ، اَللّٰهُمَّ لَاتَحْرِمْنَا اَجْرَهٗ وَلَاتُضِلَّنَا بَعْدَهٗ،

दूसरी दुआः— अल्ला हुम्मग़् फ़िर् लि हय्यिना वमय्यितिना, व शाहिदिना व ग़ाइबिना, व सग़ीरिना व कबीरिना, व ज़—करिना व उन्साना, अल्लाहुम्—म मन् अह् यै—तहू मिन्ना फ़—अह्यिही अ—लल् इस्लामि, ब—मन् त—वफ़्फ़ै—तहू मिन्ना फ़—त—वफ़्—फ़हू अ—लल् ईमानि, अल्लाहुम्—म ला तह् रिम् ना अज्—रहू वला तफ़् तिन्ना बअ्—दहू

"ऐ अल्लाह। हमारे ज़िन्दों, मुर्दों, हाज़िर, ग़ायब, छोटों, बड़ों और नर, मादा (सब को) बख़्श दे। ऐ अल्लाह! हम में से जिसे तू ज़िन्दा रखे उसे इस्लाम पर ज़िन्दा रखना, और जिसे मौत दे उसे ईमान की मौत देना। ऐ अल्लाह! इस जाने वाले के अज्र से हमें महरुम न करना और इस के बाद हमें गुमराह भी न करना (अबू दावूद)

اَللّٰهُمَّ اِنَّ فَلَانَ ابْنَ فُلَانٍ فِیْ ذِمَّتِكَ وَحَبْلِ جَوَارِكَ، فَقِهٖ فِتْنَةَ الْقَبْرِ، وَعَذَابَ النَّارِ، وَاَنْتَ اَهْلُ الْوَفَاءِ وَالْحَقِّ فَاغْفِرْلَهٗ وَارْحَمْهُ اِنَّكَ اَنْتَ الْغَفُوْرُ الرَّحِيْمُ.

तीसरी दुआ:– अल्लाहुम्–म इन्–न फुलाँ इब्–न फुलाँनिन् फी ज़िम्मति–क व हब्लि ज–वारि–क फक़िही फित्–न–तल् क़ब्रि व अज़ाबन्नारि व अन्–त अह्लुल् व–फ़ाई वल् हक्कि फग़्फिर् लहू वर्–हम्हु इन्न–क अन्तल् गफ़ूरुर्रहीम

"ऐ अल्लाह! फ़लाँ बिन फ़लाँ तेरे हवाले और तेरी हिफ़ाज़त में है, इस कब्र की आज़माइश और आग के आज़ाब से हिफ़ाज़त फ़र्मा, हक़ और वफ़ा सिर्फ़ तेरी ज़ात में है, उस को माफ़ फ़र्मा, उस पर रहमत कर, बेशक सिर्फ़ तेरी ज़ात बख़्शने वाली और रहमत करने वाली है" (अबू दावूद)

اَللّٰهُمَّ عَبْدُكَ وَابْنُ اَمَتِكَ احْتَاجُ اِلٰى رَحْمَتِكَ، وَاَنْتَ غَنِیٌّ عَنْ عَذَابِهٖ، اِنْ كَانَ مُحْسِنًا فَزِدْ فِیْ حَسَنَاتِهٖ، وَاِنْ كَانَ مُسِيْئًا فَتَجَاوَزْ عَنْهُ.

चौथी दुआ:– अल्लाहुम्–म अब्दु–क वब्नु अ–मति–क इह्ता–जु इला रह्–मति–क, व अन्–त ग़नीयुन् अन् अज़ाबिही, इन् का–न मुह्सि–नन् फज़िद् फी ह–सनातिही, वइन् का–न मुसी अन् फ–त जावज़् अन्हु"

ऐ अल्लाह! तेरा गुलाम और तेरे गुलाम का गुलाम तेरी रहमत का मुहताज बन कर आया है, तेरी ज़ात अज़ाब देने से बे नियाज़ है, अगर वह अच्छा है तो उस की नेकियाँ

ज्यादा कर दे, अगर बुरा है तो उस को माफ़ फ़र्मा"

(अबू दावूद)

(इस के बाद जो चाहे दुआ मांगे-मुस्तदरक हाकिम)

८३ आख़िरी तक्बीर और सलाम के दर्मियान भी दुआ पढ़नी साबित है। अबू यअ़फ़ूर, हज़रत अब्दुल्लाह बिन औफ़ा रज़ि० से रिवायत करते हैं:

"मेरी मौजूदगी में उन्हों ने जनाज़ा की चार तक्बीरें कहीं, फिर थोड़ी देर दुआ करते रहे, फिर फ़र्माया:" क्या तुम्हारा ख़्याल था कि मैं पांचवीं तक्बीर कहूँगा? साथियों ने कहा: नहीं, फिर खुद ही फ़रमाया: "रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम चार ही तक्बीरें कहते थे" (बैहक़ी, मुस्तदरक हाकिम)

८४ आख़िर में फ़र्ज़ नमाज़ की तरह दोनों तरफ़ सलाम कहे, पहले दायें तरफ़, फिर बायें तरफ़। हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मस्ऊद रज़ि० बयान फ़रमाते हैं:

"रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम तीन काम पाबन्दी से किया करते थे, जब कि लोगों ने उसे छोड़ रखा है। उन में से एक जनाज़ा में आ़म नमाज़ों की तरह सलाम फेरना" (बैहक़ी)

सहीह मुस्लिम शरीफ़ और दूसरी हदीस की किताबों में अब्दुल्लाह बिन मस्ऊद रज़ि० से रिवायत है

"रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम नमाज़ (जनाज़ा) के आख़िर में दो सलाम फेरा करते थे"

(मुस्लिम शरीफ़)

इस से मालूम होना है कि "आ़म नमाज के सलाम" से मुराद वही दो सलाम हैं।

८५ सिर्फ़ एक सलाम भी करना जायज़ है। हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० बयान फ़रमाते हैं

"रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने चार तक्बीरों से जनाज़ा की नमाज़ पढ़ाई और एक सलाम फेरा" (दारु कुत्नी, मुस्तद्रक हाकिम)

८६ जनाज़े में सलाम ज़रा आहिस्ता कहना सुन्नत है। इमाम और मुक़्तदी के लिये एक ही हुक्म है, जैसा कि हज़रत अबू उमामा रज़ि० की रिवायत में इन लफ़्ज़ों से साबित है (*जो मस्अला न० ८० में बयान हो चुका है*)

"फिर नमाज़ के आख़िर में धीरे से सलाम अपने दिल में कहे, मुक़्तदी भी वही कुछ करे जो कुछ उस का इमाम कर रहा है" (बैहक़ी, किताबुल्-उम्म्)

८७ जिन तीन वक़्तों में नमाज़ पढ़ना मना है, बिला ज़रुरत उन में जनाज़ा की नमाज़ भी पढ़ना मना है। हज़रत उक़्बा बिन आ़मिर रज़ि० बयान फ़र्माते हैं :

"तीन औक़ात में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्ल्म हमें नमाज़ पढ़ने और मुर्दे दफ़न करने से मना फ़र्माते थे

(१) जब सूरज निकल रहा हो यहां तक कि बुलन्द हो जाये (२) जब सूरज बिल्कुल सर के ऊपर हो यहाँ तक कि ढल जाये (३) जब डूबने लगे, यहाँ तक कि पूरी तरह डूब जाये" (मुस्लिम,अबू दावूद)

यह हुक्म जनाज़े के लिये भी है। यही मुराद सहाबा रज़ि० ने लिया है, जिस की वज़ाहत अस्ल किताब में कर दी गई है।

दफ़्न और उस के मसाइल

८८ मय्यित को दफ़्न करना वाजिब है, चाहे काफ़िर ही क्यों न हो। इस की दलील दो हदीसें हैं:

१:- कई सहाबा रिवायत करते हैं, उन में से हज़रत तल्हा अन्सारी रज़ि० की रिवायत है :

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के हुक्म से बद्र के दिन चौबीस कुरैश के (काफ़िर) बहादुरों को (उन की टागों को पकड़ कर घसीट कर) बद्र के कुयें में (एक दूसरे के ऊपर) फेंक दिया गया, यह कुआँ बन्द रहने की वजह से बदबू दार हो गया था (अल्बत्ता उमैया बिन ख़ल्फ़ अपनी ज़िरह में फूल चुका था, जब सहाबा उसे हिलाने लगे तो वह फट गया, इस लिये सहाबा ने उसे वहीं छोड़ दिया और उस पर इतनी मिट्टी और पत्थर डाले कि वह ढक गया")

(बुख़ारी, मुस्लिम)

२) हज़रत अली रज़ि० फ़रमाते हैं :

"जब अबू तालिब मर गये तो मैं ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की ख़िदमत में आ कर कहा: "आप का बूढ़ा (गुमराह) चचा मर गया (उसे कौन दफ़्न करे?) आप ने फ़रमाया : जाओ उसे दफ़्न कर दो, मेरे पास आने तक कोई काम न करना (एक दूसरी रिवायत में है कि आप ने फ़रमाया :"वह शिर्क की हालत में मरा है, जाओ उसे दफ़्न कर दो) हज़रत अली रज़ि० कहते हैं कि मैं दफ़न करके हाज़िर हुआ

तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमायाः "जाओ नहा कर आओ" और मेरे पास आने तक कोई काम न करना, मैं गुस्ल कर के हाज़िर हुआ तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने मुझे ऐसी दुआ फ़र्माई जो मुझे लाल और काले ऊँटों से भी ज़्यादा खुश कर देने वाली थी" (रिवायत करने वाले कहते हैं कि हज़रत अली रज़ि॰ जब भी मुर्दा को नहलाते तो खुद ज़रुर नहा लेते) (मुस्नद अहमद, अबू दावूद, नसई)

८६ मुसलमान को काफ़िर के साथ और काफ़िर को मुसलमान के साथ न दफ़्न किया जाये, बल्कि मुसलमान को मुसलमानों के कब्रस्तान में और काफ़िर को काफ़िरों के क़ब्रस्तान में दफ़्न किया जाये। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के ज़माने से यही तरीक़ा चला आ रहा है। इस की दलील इब्ने ख़सासिय्या की हदीस है। वह रिवायत करते हैं:

कि एक मौक़ा पर मैं रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के साथ (आप का हाथ थामे) जा रहा था कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमायाः "ऐ इब्ने ख़सासिय्या! क्या तुम अल्लाह की ना शुक्री करने लग गये हो जब कि तुम अल्लाह के रसूल के साथ चल रहे हो ? मैं ने कहा ऐ अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम! मेरे माँ-बाप आप पर कुर्बान, "मैं ज़रा भी अल्लाह की ना शुक्री नहीं करता, हर तरह का एहसान अल्लाह ने हमारे ऊपर फ़र्माया है"। फिर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम मुश्रिकों के क़ब्रस्तान में आये और फ़रमाया : "यह लोग बहुत सारे अच्छे काम करके आये हैं" आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने यह जुम्ला तीन बार दुहराया। बाद में आप

सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम मुसलमानों के क़ब्रस्तान में आये और फ़रमाया : "इन लोगों को बहुत भलाई मिल गई है" यह जुम्ला भी तीन बार दुहराया। आप अभी चल ही रहे थे कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की निगाह उठ गई तो अचानक देखा कि एक आदमी चमड़े के जूते पहन कर क़ब्रस्तान से गुज़र रहा था, तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया : "ऐ जूते पहन कर जाने वाले! अल्लाह तेरा भला करे अपने जूते उतार दो" उस आदमी ने ग़ोर से देखा, जब पहचान लिया कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम हैं तो अपने जूते उतार कर फेंक दिये।

(मस्तदरक हाकिम, नसई)

इस मस्अला की ताईद इस बात से होती है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इस बात में फ़र्क़ किया है कि जब कोई मोमिन मुसलमानों के क़ब्रास्तान की जियारत करे तो क्या कहे, और काफ़िरों के क़ब्रस्तान से गुज़रे तो क्या कहे। *(इस मस्अले की तफ़्सील इसी किताब में "ज़ियारतुल कुबूर" के बाब में आये गी)*

९० मय्यित को क़ब्रस्तान में दफ़्न करना सुन्नत है। इस लिये कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम फ़ौत होने वालों को "बक़ीअ़" के क़ब्रस्तान में दफ़्न करते थे। इस मस्अले के तअ़ल्लुक़ से हदीसें तवातुर से साबित हैं : चन्द एक का बयान मुख़्तलिफ़ मसाइल के तहत हो चुका है। हज़रत बशीर बिन ख़सासिय्या रज़ि० की रिवायत अभी ऊपर गुज़री है जो मस्अला न० ८९ में हैं। सहाबा रज़ि० और दूसरे बुर्जुगाने दीन उम्मत में से किसी के बारे में यह साबित नहीं है कि वह लोग क़ब्रस्तान के अलावा कहीं और दूसरी जगह दफ़्न किये गये हों। अल्बत्ता यह बात अपनी जगह पर बजा है कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम घर के कमरे में (जहाँ इन्तक़ाल हुआ था)

दफ़्न हुये, लेकिन आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की खुसूसिय्यत में से है, जिस की वज़ाहत हज़रत आइशा रज़ि० की हदीस से होती है। वह फ़र्माती हैं:

"जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम इन्तक़ाल फ़र्मा गये तो आप को दफ़्न करने के बारे में सहाबा में इख़्तलाफ़ हो गया, इस मौक़ा पर हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ि० ने कहा : " मैं ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम को यह बयान करते हुये सुना है जिसे मैं आज तक नहीं भूला हूँ कि "अल्लाह तआ़ला जिस नबी को जहाँ दफ़न करना पसन्द करता है वहीं उस नबी को वफ़ात देता है" चुनान्चे आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम को आप के बिस्तर वाली जगह पर दफ़्न किया गया" (तिर्मिज़ि)

६१ लड़ाई में शहादत पाने वाले ऊपर के हुक्म से अलग हैं, उन्हें जहाँ शहीद हुये हैं वहीं दफ़्न किया जायेगा, क़ब्रस्तान में नहीं लाया जायेगा। हज़रत जाबिर रज़ि० बयान फ़र्माते हैं :

"रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम जब मुश्रिकों से मुलाक़ात करने के लिये मदीना से निकले तो मेरे वालिद ने कहा "ऐ जाबिर! जब तक हमारे बारे में तुम्हें नहीं मालूम हो जाता तुम्हारी ज़िम्मे दारी है कि मदीना वालों की देख-भाल करो, अगर मुझे अपने बाद बच्चियों की फ़िक्र न होती तो अल्लाह की क़सम! मुझे यह पसन्द था कि तुम भी मेरे सामने शहीद हो जाते" हज़रत जाबिर बयान करते हैं कि मैं निगरानी कर रहा था कि मेरी फूफी जान मेरे वालिद और मामूँ को एक ऊंटनी पर लाद कर ले आयीं, वह उन्हें मदीना ही में मुसलमानों के कब्रस्तान में दफ़्न करना चाहती

थीं, इतने में एक आदमी एलान करता हुआ पहुँचा "सुन लो! रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का हुक्म है कि शहीदों को वापस ला कर शहादत गाहों में दफ़्न करो "चुनान्चे हम ने उन दोनों को वापस ले जाकर शहादत गाह में ही दफ़्न किया"

(मुस्नद अहमद ३/३९७)

९२ बग़ैर किसी मजबूरी के निम्न लिखत सूरतों में दफ़्न करना जायज़ नहीं :

१.) **तीन मक्रूह वक़्तों में** (दफ़न करना जायज़ नहीं) जैसा कि हज़रत उक़्बा बिन आमिर रज़ि० की हदीस में गुज़र चुका है (दिखें-मस्अला न० ८७) हदीस यूँ है :

"तीन औक़ात में नमाज़ पढ़ने या मुर्दों को दफ़्न करने से रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम मना फ़र्माते थे" (मुस्लिम, अबू दावूद)

२.) **रात को दफ़्न करना** (जायज़ नहीं) हज़रत जाबिर बिन अब्दुल्लाह रज़ि० बयान फ़र्माते हैं :

"रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने मना फ़र्माया कि मुर्दा को रात के वक़्त दफ़्न किया जाये, यहाँ तक कि उस की नमाज़ अदा की जाये, मगर यह कि आदमी मजबूर हो" (यह हदीस तफ़्सील के साथ मस्अला न० ८७ में बयान हो चुकी)

९३ अगर किसी मजबूरी के तहत रात ही को दफ़्न करना पड़े तो जायज़ है, चाहे चराग़ इस्तेमाल करना पड़े और उसे (चराग़ को) क़ब्र के अन्दर तक ले जाना पड़े, ताकि दफ़्न करने में आसानी हो। हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि० बयान फ़रमाते हैं :

"रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने एक आदमी को रात के वक़्त दफ़्न फ़र्माया और क़ब्र के

अन्दर चराग़ जला कर रोशनी की"

(इब्ने माजा, तिर्मिज़ी)

६४ क़ब्र को गहरा, कुशादा और अच्छा बनाना ज़रुरी है। इस मस्अले के तअ़ल्लुक़ से दो हदीसें हैं :

१) हज़रत हिशाम बिन आ़मिर रज़ि० बयान फ़र्माते हैं :

"उहुद के दिन कई मुसलमान शहीद हुये और बहुत सारे ज़ख़्मी भी हुये (हम ने अर्ज़ किया कि ऐ अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम! हर शहीद के लिये क़ब्र खोदना बहुत कठिन है, इस सूरत में क्या हुक्म है?) आप ने फ़रमाया :"क़ब्रें गेहरी, कुशादा और अच्छी खोदो, दो या तीन को एक ही क़ब्र में दफ़्न कर दो, जिसे ज़्यादा कुरआ़न याद हो उसे आगे रखो" हिशाम बिन आमिर रज़ि० कहते हैं कि मरे वालिद तीन में से तीसरे थे, कुरआ़न ज़्यादा याद न होने की वजह से पहले रखे गये।" (नसई)

२.) एक अन्सारी सहाबी रज़ि० रिवायत करते हैं:

"हम रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के साथ एक अन्सारी के जनाज़े में गये, मैं अभी बच्चा था और अपने वालिद के साथ था, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम क़ब्र के गढ़े के पास बैठ कर खोदने वाले को हिदायत देने लगे, फ़रमाते थे : "सर की तरफ़ से खुला करो, पाँव की तरफ़ से खुला करो, उस के लिये जन्नत में कितने ही खजूरों के लटके हुये ख़ोशे हैं" (मुस्नद इमाम अहमद)

६५ "लहद" *(बग़ली क़ब्र)* और "शक़" *(सन्दूक़ की तरह)* दोनों तरह जायज़ है, इस लिये कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के

ज़माने में दोनों तरह अमल होता था। लेकिन "लहद" बनाना अफ़्ज़ल है। इस तअल्लुक़ से बहुत सी हदीसें हैं, इन में से दो बयान की जाती हैं:

१.) हज़रत अनस बिन मालिक रज़ि० बयान करते हैं :

"जब रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की वफ़ात हुई तो मदीना में एक आदमी लहद वाली और एक दूसरा आदमी सन्दूक़ नुमा क़ब्रें बनाता था, सहाबा ने कहा कि हम अपने रब से इस्तिख़ारा करते हुये दोनों को बुला भेजते हैं, जो पहले आ गया काम उसी के हवाले कर देंगे। दोनों को पैग़ाम भेजा गया, लहद बनाने वाला पहले पहुँच गया, इस लिये उन्हों ने नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के लिये लहद (वाली क़ब्र) बनाई" (मुश्किलुल् आसार-तहावी)

२.) हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का क़ौल नक़ल करते हैं :

"लहद हमारे लिये और सन्दूक़ नुमा गढ़ा दूसरों के लिये" *(अबू दावूद, तिर्मिज़ी, नसई)*

९६ ज़रुरत के मुताबिक़ दो या तीन को एक ही क़ब्र में दफ़्न करने में कोई हरज नहीं, अल्बत्ता अफ़्ज़ल को मुक़द्दम (आगे) किया जायेगा, इस बारे में कई हदीसें हैं (हज़रत अनस बिन मालिक रज़ि० की हदीस मस्अला न० ३७ और हज़रत हिशाम बिन आमिर की हदीस मस्अला न० ९४ में बयान हो चुकी है।)

९७ मर्द ही मुर्दा को क़ब्र में उतारेंगें, अगर्चे मय्यित औरत ही की क्यों न हो। इस की दलीलें यह हैं :

१.) रसूलुल्ला सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के ज़माने से आज तक यही तरीक़ा मुसलमानों में चला आ रहा है। इस के तअल्लुक़ से हज़रत अनस बिन मालिक की हदीस मस्अला न० १०० में आगे आयेगी।

२.) मर्द यह काम (औरतों के मुक़ाबले में) बेहतर तरीक़ से अन्जाम दे सकते हैं।

३.) अगर औरतें ऐसा करने लग जायें तो उन के जिस्म ग़ैर मर्दों के सामने ज़ाहिर होने लगेंगे, और यह बिल्कुल जायज़ नहीं।

६८ मय्यित के क़रीबी रिश्तेदार क़ब्र में उतारने के ज़्यादा हक़-दार हैं। अल्लाह तआला का फ़र्मान है :

> *"अल्लाह की किताब में ख़ून के रिश्ते-दार एक दूसरे के ज़्यादा हक़-दार हैं"* (सूरः अन्फ़ाल, आयः ७५)

हज़रत अ़ली रज़ि० का बयान है :

> *"मैं ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम को गुस्ल दिया, तलाश करने के बाद भी मुझ को कोई ग़ैर मामूली बात नज़र न आई, क्यों कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ज़िन्दगी में और ज़िन्दगी के बाद भी पाक-साफ़ थे। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के दफ़्न में चार आदमी शामिल थे (दूसरा कोई नहीं) अ़ली, अब्बास, फ़ज़्ल, सालिह (रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्ल्म के ग़ुलाम) आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के लिये "लहद" बनाई गई और कच्ची ईटें खड़ी कर के लगाई गयीं"*
>
> (मुस्तदरक हाकिम)

हज़रत अब्दुरहमान बिन अब्ज़ा बयान करते हैं :

> *" मैं ने हज़रत उमर रज़ि० की इमामत में हज़रत ज़ैनब बिन्त जहश रज़ि० की नमाज़े जनाज़ा अदा की, आप ने चार तक्बीरों से नमाज़ अदा की, फिर हज़रत उमर रज़ि० ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की बीवियों को सन्देश भेज कर मालूम किया कि उन की राय में उन्हें क़ब्र में कौन उतारे? (रिवायत करने*

वाले कहते हैं कि हज़रत उमर रज़ि० का ख़्याल था कि वही यह काम अन्जाम दें) लेकिन रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की बीवियों ने यह सन्देश भेज कर फ़रमाया: "देखो! जो इन्हें ज़िन्दा हालत में देख सकता था, वही इन्हें क़ब्र में उतारे" हज़रत उमर ने कहा "आप ने सच फ़र्माया" (तहावी, बैहक़ी)

९९ शौहर अपनी बीवी को खुद दफ़्न कर सकता है। हज़रत आइशा रज़ि० फ़रमाती हैं : कि जिस रोज़ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के वफ़ात वाली बीमारी शुरु हुई तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम मेरे पास आये तो मैं ने कहा: "हाय मैं सर के दर्द से मर गई" तो जवाब में आप ने फ़रमाया :

"मेरी तमन्ना है कि यह उस वक़्त हो जब मैं ज़िन्दा हूँ, फिर मैं खुद तुम्हें तैयार करुँ और दफ़्न करुँ"

हज़रत आइशा ने ग़ैरत में आ कर कहा "गोया कि आप उस दिन *(मेरी जगह)* किसी दूसरी औरत से मुलाक़ात कर लेंगे ? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

"हाय मेरा सर! मेरे पास अपने वालिद और भाई को बुलाओ ताकि मैं अबू बक्र के मुतअ़ल्लिक़ एक बात लिख दूँ। मुझे डर है कि कोई आदमी यह न कहे, या कोई इस बात की तमन्ना न करे कि मैं ज्यादा हक़दार हूँ, जब कि अल्लाह तआ़ला और मुसलमान अबू बक्र के अ़लावा किसी को क़ुबूल नहीं करते"

(मुस्नद इमाम अहमद)

१०० शौहर अपनी बीवी को इस शर्त पर दफ़्न कर सकता है कि उस ने गुज़री रात हम-बिस्तरी न की हो, वर्ना उस के लिये दफ़्न करना जायज़ नहीं, कोई दूसरा दफ़न करने के लिये ज्यादा बेहतर है चाहे वह अजनबी ही क्यों न हो *(इस शर्त पर कि उसने भी हम बिस्तरी*

न की हो) हज़रत अनस बिन मालिक रज़ि० बयान फ़रमाते हैं :

> *"हम रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की साहब ज़ादी (उम्मे कुल्सूम) की वफ़ात पर मौजूद थे, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम क़ब्र के पास बैठे हुये थे, मैं ने आप की आँखों से आँसू बहते हुये देखे, फिर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया : " क्या कोई ऐसा है जिस ने आज रात अपनी बीवी से सुहबत न की हो ? हज़रत अबू तल्हा रज़ि० ने कहा: "मैं हूँ ऐ अल्लाह के रसूल!" आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया :" फिर (क़ब्र में) उतारो," फिर वह क़ब्र में उतरे और उन्हें दफ़्ना दिया" (बुख़ारी, मुस्नद अहमद)*

१०१ मय्यित को क़ब्र की पिछली तरफ़ से दाख़िल करना सुन्नत है। हज़रत अबू इस्हाक़ रज़ि० बयान फ़रमाते हैं :

> *"हज़रत हारिस रज़ि० ने वसिय्यत की कि उन की नमाज़े-जनाज़ा अब्दुल्लाह बिन यज़ीद पढ़ायें, उन्हों ने नमाज़ पढ़ाई, फिर टाँगों वाली तरफ़ से (पिछली तरफ़ से) उन्हें क़ब्र में दाख़िल कर दिया और फ़र्माया। "यह मस्नून तरीक़ा है"।(मुसन्निफ़ इब्ने शैबा)*

हज़रत इब्ने सीरीन रह० फ़र्माते हैं :

> *"मैं हज़रत अनस बिन मालिक रज़ि० के साथ एक जनाज़े में था, उन के कहने पर मय्यित को टाँगों की तरफ़ से क़ब्र में उतारा गया" (मुसन्निस इब्ने शैबा)*

१०२ मय्यित को क़ब्र में दायें करवट लिटाया जाये गा, उस का मुँह क़िब्ले की तरफ़ रहेगा, उस का सर क़िब्ला के दायें तरफ़ और पैर बायें तरफ़ रहेंगे। मुसलमानों का अमल इसी तरीक़ी पर रसूलुल्लाहु सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के ज़माना से ले कर आज तक है। ज़मीन पर हर क़ब्रस्तान की यही शक्ल है। यही *"अल्-मुहल्ला"* में इमाम

इब्ने हज़्म रह० ने लिखी है। (मुहल्ला, ४/१७३)

१०३ जो आदमी मुर्दा को लहद में उतरे वह यह दुआ पढ़े:

بِسْمِ اللهِ وَعَلٰى سُنَّةِ رَسُوْلِ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ

बिस्मिल्लाहि व अ़ला सुन्नति रसूलिल्लाहि सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम

"अल्लाह के नाम से और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की सुन्नत के मुताबिक़ (अबू दावूद)

नोट : एक रिवायत में "सुन्नति" की जगह "मिल्लति" आया है।

यह दुआ भी हदीस से साबित है :

بِسْمِ اللهِ وَبِاللهِ وَعَلٰى مِلَّةِ رَسُوْلِ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ

"बिस्मिल्लाहि, व बिल्लाहि, व अ़ला मिल्लति रसूलिल्लाहि सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम"

"अल्लाह के नाम से और अल्लाह के हुक्म से और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की मिल्लत पर" (तिर्मिज़ी)

१०४ जो भी क़ब्र के पास हो लहद बन्द होने के बाद उसे तीन मर्तबा अपने दोनों हाथों से इकट्ठे भर-भर के मिट्टी डालनी चाहिये। हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० बयान फ़रमाते हैं:

"रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने जनाज़ा की नमाज़ पढ़ाई, फिर मय्यित के पास आये और सर की तरफ़ से तीन मर्तबा दोनों हाथ भर-भर के मिट्टी डाली" (इब्ने माजा)

१०५ मुर्दा को दफ़्न करने के बाद निम्न लिखित काम करना मस्नून

है :

१.) क़ब्र को ज़मीन से एक बालिश्त जितना ऊँचा किया जाये, ज़मीन के बराबर न रहे, ताकि पहचान रहे और उस की हिफ़ाज़त हो सके और तौहीन न हो। इस की दलील हज़रत अनस रज़ि० की यह रिवायत है:

"नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के लिये लहद तैयार की गई, उस पर कच्ची ईंटें लगाई गयीं और ज़मीन से एक बालिश्त जितनी (आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की) क़ब्र ऊँची की गई"

(इब्ने हिब्बान बैहक़ी)

२.) क़ब्र ऊँट के कोहान की तरह बनाई जाये। हज़रत सुफ़्यान बिन दीनार अत्तम्मार रह० फ़रमाते हैं :

"मैं ने नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की क़ब्र (और अबू बक्र व उमर की क़ब्रों को) कोहान की तरह देखा है" (बुख़ारी, बैहक़ी)

३.) उस पर पत्थर या किसी दूसरी चीज़ का निशान रख दिया जाये, ताकि उन के घर वालों में से कोई वफ़ात पाये तो उस के पास दफ़्न कर दिया जाये। हज़रत मुत्तलिब बिन वदाआ़ रज़ि० बयान फ़रमाते हैं :

"जब हज़रत उस्मान बिन मज़ूऊन रज़ि० का इन्तिक़ाल हुआ और उन का जनाज़ा लाकर दफ़्न किया गया तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने एक आदमी से कहा कि वह एक पत्थर ले आये. वह आदमी पत्थर न उठा सका, चुनान्चे आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम वहाँ तक गये और आस्तीन चढ़ाई (हज़रत मत्तलिब बयान करते हैं कि जिन सहाबी ने मुझे यह वाक़िआ बयान किया वह फ़र्माते थे कि गोया मैं अब भी रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के हाथों की

सफ़ेदी देख रहा हूँ जब कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने आस्तीन ऊँची की) फिर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने पत्थर उठा कर उन के सर पर रख दिया। रावी कहते हैं कि इस से मैं अपने भाई की क़ब्र पहचान सकूँ गा और जो मेरे ख़ान्दान से मरे गा उस के क़रीब दफ़्न करूँगा"।

(अबू दावूद, बैहक़ी)

४.) मय्यित को तल्क़ीन न की जाये जैसा की आज कल मशहूर है। इसलिये कि तल्क़ीन के तअल्लुक़ से हदीस नहीं है, बल्कि होना यह चाहिये कि क़ब्र के क़रीब खड़े हो कर उस की साबित क़दमी की दुआ करें, ख़ुद भी मय्यित के हक़ में इस्तिग़फ़ार करे और दूसरों को भी इस्तिग़फार के लिये कहे। हज़रत उस्मान बिन अ़फ़्फ़ान रज़ि० बयान फ़रमाते हैं:

"रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का मामूल था कि जब मय्यित को दफ़्न कर के फ़ारिग़ हो जाते तो खड़े हो कर फ़रमाते, "अपने भाई के हक़ में इस्तिग़फ़ार करो और उस के लिये साबित क़दमी की दुआ करो, क्यों कि उस से अब सवाल हो रहा है"

(अबू दावूद)

१०६ दफ़्न के दर्मियान मौजूद लोगों को मौत और उस के बाद आने वाले हालात याद दिलाने की ग़रज़ से क़ब्र के पास बैठना जायज़ है। अल्लाह की ख़ुश्नूदी हासिल करने की रग़बत, या उस के ख़ौफ़ से डराने और नसीहत की ख़ातिर यह गुफ़्तगू लम्बी भी हो जाये तो कोई हरज नहीं। हज़रत बराअ् बिन आ़ज़िब रज़ि० से रिवायत है कि एक अन्सारी के जनाज़े में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के साथ निकले जब हम क़ब्र के पास पहुँचे तो अभी लहद तैयार नहीं थी, चुनान्चे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम (क़िब्ला की तरफ़ रुख़

कर के) बैठ गये और हम भी आप के चारों तरफ़ बैठ गये, (और ऐसे चुप चाप थे) गोया हमारे सरों पर परिन्दे हों, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के हाथ में एक छडी थी जिस से ज़मीन कुरेद रहे थे (आप कभी आसमान और कभी ज़मीन की तरफ़ देखते, इसी हालत में आप ने निगाह को तीन बार ऊपर नीचे किया) फ़िर दो तीन बार ईशाद फ़र्माया

"अल्लाहुम्-म् इन्नी अऊज़ु बि-क मिन् अज़ाबिल् क़ब्रि"

"ऐ अल्लाह। में क़ब्र के अज़ाब से तुम्हारी पनाह चाहता हूँ"

फिर फ़र्माया : "जब मोमिन बन्दा इस दुनिया से उस दुनिया (आख़िरत) को जा रहा होता है, तो आसमान से उस के पास सूरज की तरह चमक दार चेहरे वाले फ़रिश्ते आते हैं जिन के पास जन्नत से लाया हुआ कफ़न और खुश्बू होती है, वह नज़र की आख़िरी हद पर आ कर बैठ जाते हैं, आख़िर में मलकुल-मौत (अलैहिस्सलाम) आते हैं और उस के सर के पास बैठ कर फ़र्माते हैं

"ऐ पाक रुह! अपने रब की मग़्फ़िरत व इनायत के पास पहुँच"

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया : फिर वह रुह इस तरह निकलती है जैसे पानी की बूँदें मश्कीज़े से टपकती हैं, चुनान्चे मलकुल मौत उसे ले लेता है (एक दूसरी रिवायत में है : "जब वह रुह निकल जाती है तो ज़मीन व आसमान के दर्मियान का हर फ़रिश्ता उस के हक़ में रहमत की दुआएँ करता है और आसमान के अन्दर रहने वाले तमाम फ़रिश्ते उस के हक़ में दुआ करते हैं, उस की अगुवानी के लिये आसमान के तमाम दर्वाज़े खुल जाते हैं, तमाम दर्वाज़ों के दर्बान अल्लाह से इल्तजा करते हैं, कि उसे हमारे पास से गुज़ारा जाये) जब मलकुल-मौत ले लेता है तो दूसरे फ़रिश्ते आँख झपकने

से पहले उस से ले लेते हैं, और जन्नती कफ़न और खुश्बू में रख लेते हैं। इस बारे में अल्लाह तआला का इर्शाद है :

> *"हमारे भेजे हुये फ़रिश्ते उस की जान निकाल लेते हैं और अपना फ़र्ज़ अदा करने में कुछ भी कोताही नहीं करते"* *(अन्आम, आयः ६१)*

उससे दुनिया की सब से अच्छी खुश्बू के लपके उठते हैं, फिर जब फ़रिश्ते उसे ले कर ऊपर जाते हैं, तो फ़रिश्तों की जिस जमाअत के पास से जाते हैं तो वह पूछते हैं कि यह किस की इतनी इच्छी रुह है ? फ़रिश्ते जवाब में कहते हैं : "यह साहब फ़लाँ बिन फ़लाँ हैं" उस के खूबसूरत नाम से याद करते हुये (जिस से वह दुनिया में पुकारा जाता था) इसी तरह वह फ़रिश्ते उसे ले कर पहले आसमान तक पहुँच जाते हैं, फिर वह इस की ख़ातिर दर्वाज़ा खुलवाना चाहते हैं तो वह खोल दिया जाता है, फिर अगले आसमान तक उस आसमान के मुक़र्रब फ़रिश्ते उसे अल्विदा कह कर आते हैं, यही मामला सात्वें आसमान तक चलता है। इस मौक़ा पर अल्लाह तआला ईशाद फ़र्माता है :

> *"मेरे बन्दे का आमाल नामा नेक लोगों के दफ़्तर में रख दो, और आप को क्या ख़बर है कि नेक लोगों का दफ़्तर क्या है ? एक लिखी हुई किताब है जिस की हिफ़ाज़त मुक़र्रब फ़रिश्ते करते हैं*
>
> *(अल् मुतफ़्फ़िफ़ीन, आयः १९,२०)*

उस का आमाल नामा नेक लोगों के दफ़्तर में रख दिया जाता है, फिर अल्लाह तआला फ़रमाता है :

> *"इसे ज़मीन तक वापस पहुँचा दो। मैं ने इन से वादा किया है कि मैं ने इन्हें ज़मीन से पैदा किया, उसी में वापस करुँ गा और उसी से निकालूँगा"*

फिर उसे ज़मीन पर वापस कर दिया जाता है, उस की रुह दोबारा

जिस्म में डाल दी जाती है (जब उस के साथी दफ्न करके वापस होते हैं तो उन के जूतों की आवाज़ भी सुन्ता है) उस के पास दो फ़रिश्ते आते हैं और उस मुर्दे को सख़्त अन्दाज़ में हुक्म दे कर उठाते हैं, और सवाल करते हैं : **मन् रब्बु–क?**....(तेरा रब कौन है ?)
वह जवाब देता है : **रब्बियल्लाहु**....(मेरा रब अल्लाह है)
वह सवाल करते हैं : **मा दीनु–क?** (तुम्हारादीन क्या है ?)
वह जवाब देता है : **दीनि–यल् इस्लाम** (मेरा दीन इस्लाम है)
वह सवाल करते हैं : जो आदमी तुम्हारे पास पैगम्बर बना कर भेजा गया है उस के बारे में क्या ख़्याल है ?
वह जवाब देता है : वह अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम हैं
वह सवाल करते हैं : तुम्हारी मालूमात क्या हैं ?
वह जवाब देता है : मैं अल्लाह की किताब पढ़कर ईमान लाया और तस्दीक़ की
एक दूसरी रिवायत में है कि फ़रिश्ता उसे झिंजोड़ कर कहता है

"तेरा रब कौन है ? तेरा दीन क्या है ? तेरा नबी कौन है ?"

यह आख़िरी इम्तिहान है जिस से किसी मोमिन को सामना करना पड़ता है। इसी मौक़े के लिये अल्लाह तआला ने इर्शाद फ़र्माया:

"ईमान लाने वालों को अल्लाह एक क़ौले साबित की बुनियाद पर दुनियां में सबात अ़ता करता है"

(सूर: इब्राहीम, आय: २७)

चुनान्चे वह आदमी कहता है :

"मेरा रब अल्लाह है, मेरा दीन इस्लाम है, मेरे नबी मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) हैं"

चुनान्चे एक एलान करने वाला आसमान में एलान करता है :

"मेरे बन्दे ने सच कहा, उस का ठिकाना जन्नत में

बना दो, जन्नत का लिबास पहना दो और जन्नत की तरफ़ एक दर्वाज़ा खोल दो"

चुनान्चे जन्नत की हवायें और खुश्बू उस के पास आने लगती हैं, उस की क़ब्र निगह की आख़िरी हद तक कुशादा कर दी जाती है। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने आगे फ़रमाया :

"उस के पास एक ख़ूबसूरत आदमी आता है जिस के कपड़े भी ख़ूबसूरत, खुश्बू भी प्यारी होती है, वह आ कर कहता है : "तुझे अच्छी ख़बर की बशारत देता हूँ, इसी दिन का तुम से वादा किया गया था" चुनान्चे वह भी जवाब में कहे गा : "अल्लाह तआ़ला तुम्हें भी खुश रखे तुम कौन हो ? तुम्हारा चेहरा तो अच्छी ख़बर ही ला सकता है" वह जवाब देता है कि मैं तुम्हारा नेक अ़मल हूँ (अल्लाह की क़सम! मैं तो इतना ही तुम्हें जानता हूँ कि तुम अल्लाह की इताअ़त में जल्दी करने वाले और उस की नाफ़र्मानी में बहुत सुस्त हो, अल्लाह तुम्हें बेहतर बदला दे गा) फिर उस के लिये एक जन्नत का और एक दोज़ख़ का दर्वाज़ा खुल जाता है और बता दिया जाता है कि अगर तुम अल्लाह की नाफ़र्मानी करते तो तुम्हारा यह ठिकाना होता (दोज़ख़ का) अल्लाह ने तुम्हें यह ठिकाना (जन्नत का) दे दिया है। वह जब जन्नत की नेमतों को देखता है तो कहता है कि अल्लाह क़्यामत जल्द नाज़िल कर दे ताकि मैं अपने ख़ान्दान व माल तक पहुँच सकूँ, उसे जवाब मिलता है, अभी आराम करो

और जब काफिर इस दुनिया से मर कर आख़िरत में जाता है तो आसमान से उस के पास (बड़े सख़्त, ताक़त वाले) काले चेहरे वाले फ़रिश्ते आते हैं, उन के पास जहन्नमी टाट होते हैं, निगाह की आख़री

हद तक उस के पास बैठ जाते हैं, आख़िर में मलकुल-मौत आते हैं और उस के सर के पास बैठ कर कहते हैं:

"ऐ ख़बीस रुह! अल्लाह की नाराज़गी और गुस्से के पास पहुँच"

फिर उस के जिस्म में दाख़िल हो कर इस तरह उस की रुह निकालते हैं, जैसे गोश्त वाली नोकीली सीख़ भीगे ऊन से निकाली जाये (इस की वजह से रगें और पट्ठे टूट-टूट जाते हैं) ज़मीन व आसमान के दर्मियान और आसमान का हर फ़रिश्ता उस पर लानत भेजता है, आसमान के तमाम दर्वाज़े बन्द कर दिये जाते हैं, और हर दर्वाज़े का चौकीदार अल्लाह तआ़ला से दर्ख़ास्त करता है कि यह रुह यहाँ से न गुज़ारी जाये। मलकुल-मौत उसे निकाल लेता है, और आँख झपकने से पहले दूसरे फ़रिश्ते उस के हाथ से ले कर उसे टाट में रख लेते हैं। उस टाट से ऐसी बदबू आती है जैसे किसी सड़े-गले मरे हुये की बदबू हो। फ़रिश्ते उस रुह को ले कर ऊपर जाते हैं, फ़रिश्तों की जिस जमाअत के पास से गुज़रते हैं, तो वह पूछते हैं कि यह किस ख़बीस की रुह है? फ़रिश्ते उस का सब से बुरे क़िस्म का दुनियावी नाम लेकर बताते हैं कि यह फलाँ बिन फ़लाँ है, इस तरह वह पहले आसमान तक पहुँच जाते हैं। जब उस के लिये दर्वाज़ा खोलने को कहा जाता है तो नहीं खोला जाता। इस मौक़े पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने यह आय: तिलावत फ़र्माई:

"उस के लिये आसमान के दर्वाज़े हर्गिज़ न खोले जायें गे, उन का जन्नत में जाना इतना ही ना-मुमकिन है जितना कि सूई के नाके से ऊँट का गुज़रना।"

(अल्-अअ़राफ़, आय: ४०)

अल्लाह तआला फ़र्माता है:

उस का आमाल नामा क़ैद ख़ाने के दफ़्तर में रख दो जो कि सब से निचली ज़मीन में है (फिर फ़र्माया

जाता है कि मेरे बन्दे को ज़मीन में वापस भेज दो मैं ने उस से वादा किया था: "उसी से उस को पैदा करूँ गा, उसी में वापस करूँ गा, और यहीं से दोबारा उठाऊँगा"

चुनान्चे बहुत बेदर्दी से उस की रुह को आसमान से नीचे फेंक दिया जाता है यहाँ तक कि वह उस के जिस्म पर आ कर गिरती है। फिर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने यह आय: तिलावत फ़र्माई:

"और जो कोई अल्लाह के साथ शरीक करेगा तो गोया वह आसमान से गिर गया, अब या तो उसे परिन्दे उचक ले जायेंगे या हवा उस को ऐसी जगह ले जा कर फेंक देगी, जहाँ उस के चीथड़े उड़ जायेंगे"

(सूर: हज्ज, आय: ३१)

(आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया : जब उस के साथी वापस हो रहे होते हैं तो वह उन के जूतों की आवाज़ सुनता है, उस के पास दो (सख़्त मिज़ाज) फ़रिश्ते आते हैं और उसे उठा कर बिठा देते हैं और वह दोनों फ़रिश्ते उस से सवाल करते हैं :

*सवाल करते हैं : **मन् रब्बु–क** (तेरा रब कौन है?)*
*वह जवाब देता है : **ला अदरी** (मुझे मालूम नहीं)*
*फ़रिश्ते पूछते हैं : **मा दीनु–क** (तेरा दीन क्या है)*
*वह जवाब देता है : **ला अदरी** (मुझे ख़बर नहीं)*
फ़रिश्ते पूछते हैं : जो आदमी तुम्हारी तरफ़ रसूल बना कर भेजा गया था उस के बारे में क्या राय है?
वह कहता है : मुझे तो उन का पता भी नहीं।
जब बताया जाता है कि उस का नाम "मुहम्मद *(सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम)* है, तो वह परेशानी में कहता है *(मुझे तो ख़बर नहीं, अल्बत्ता लोगों को ऐसा कहते सुना है, तो उस से कहा जाता है कि तू न तो*

खुद पहचान सका और न तूने किसी की पैरवी की) आसमान से एलान करने वाला एलान करता है कि: "यह झूठा है इसे आग में झोंक दो और जहन्नम के दर्वाज़े इस के लिये खोल दो", चुनान्चे उस के पास जहन्नम की गर्मी और लू आती है। उस की क़ब्र इतनी ज़्यादा तन्ग हो जाती है कि उस की पिसुलियाँ एक दूसरे में फंस जाती हैं। उस के पास बुरे चहरे का एक आदमी आता है उस के कपड़े भी बहुत गन्दे होते हैं, उस से बदबू उठ रही होती है, वह आ कर कहता है कि एक बुरी ख़बर है, यह वही दिन है जिस का तुझ से वादा किया था, यह मुर्दा उस से कहता है अल्लाह तुझे भी बुरी ख़बर सुनाये तू है कौन? ऐसा चेहरा तो कोई बुरी ख़बर ही ला सकता है, वह जवाब में कहता है "मैं तेरा बुरा अमल हूँ" (अल्लाह की क़सम! जहाँ तक मैं तुझे जानता हूँ तू तो नेकी में बड़ा काहिल व सुस्त और बुराई के मामले में बड़ा चुस्त व तेज़ था) चुनान्चे अल्लाह तआला तुझे बुरा ही बदला दे गा।

(फिर उस के ऊपर एक अन्धा, बहरा दारोग़ा मुक़र्रर कर दिया जाता है जिस के हाथ में लोहे की ऐसी सलाख़ होती है कि अगर पहाड़ पर भी मार दी जाये तो वह पहाड़ चूर-चूर हो जाये। फिर वह फ़रिश्ता उसे ऐसी मार मारता है जिस से वह मिट्टी हो जाता है, फिर अल्लाह तआला उसे पहली हालत में कर देता है, फिर वह उसे दोबारा मारता है जिस की वजह से वह ऐसा चिल्लाता है कि उस की चीख़ व पुकार को जिन्नात व इन्सान के अ़लावा हर जान

दार सुनता है। उस के लिये आग का दर्वाज़ा खोल दिया जाता है और आग का ही बिछौना होता है) वह दर्ख़ास्त करता है कि ऐ अल्लाह क़यामत न आये *(मुस्तद रक हाकिम, मुस्नद अहमद, अबू दावूद, नसई, इब्ने माजा वग़ैरा की हदीसों का ख़ुलासा)*

१०७ अगर कोई अहम ज़रुरत पड़ जाये तो मय्यित को क़ब्र से निकालना जायज़ है, जैसे अगर वह बग़ैर ग़ुस्ल या कफ़न के दफ़्न हुआ हो, या इसी तरह की कोई और ज़रुरत हो। चुनान्चे हज़रत जाबिर रज़ि० बयान करते हैं :

"अब्दुल्लाह बिन उबय्यि को जब क़ब्र में उतार दिया गया तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम तशरीफ़ लाये, आप (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) के हुक्म से उसे निकाल लिया गया, आप ने उसे घुटनों पर रख कर अपना थूक उस पर थूका और अपनी क़मीस भी उसे पहनाई (हज़रत जाबिर रज़ि० कहते हैं कि उस की नमाज़े जनाज़ा भी अदा फ़र्माई, वल्लाहु आलम) (अब्दुल्लाह बिन उबय्यि ने हज़रत इब्ने अ़ब्बास रज़ि० को अपनी क़मीस पहनाई थी) (बुख़ारी, मुस्लिम)

नोट :— अब्दुल्लाह बिन उबय्यि जो मशहूर मुनाफ़िक़ था उस को रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने अपनी क़मीस शायद इस लिये पहनाई थी कि जब आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के चचा (अ़ब्बास रज़ि०) बद्र की लड़ाई में क़ैदी बन कर आये तो उन के बदन पर कपड़े न थे। उस दिन अ़ब्दुल्लाह बिन उबय्यि ने अपनी क़मीस उन को पहिनने के लिये दे दी थी, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने उसी एहसान का बदला उतारा था। क़ुरआन मजीद में तो

मुनाफ़िक की नमाज़े जनाज़ा पढ़ने की मिनाही आई है, *(देखें-मस्अला न० ६१)*

१०८ किसी आदमी के लिये मुनासिब नहीं की मरने से पहले ही वह अपनी क़ब्र तैयार कर ले, इस लिये कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम और सहाबा ने ऐसा नहीं किया, किसी बन्दे को यह मालूम नहीं कि वह कहाँ मरेगा। अगर मौत की तैयारी ही करनी है तो नेक काम से हो सकती है। "अल् इख़्तियारातुल्-इल्मिय्या" में शैखुल इस्लाम इमाम इब्ने तैमिया रह० ने यही बात लिखी है।

तअ्ज़ियत्

१०६ मय्यित के रिश्ते-दारों से हमदर्दी का इज़्हार करना यह शरई हुक्म है। इस के बारे में दो हदीसें मौजूद हैं।

१.) "हज़रत कु़री मुज़नी रज़ि० बयान करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम जब बैठते, तो कई सहाबा आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की ख़िदमत में आ कर बैठ जाते उन में से एक साहब का छोटा सा बच्चा था उस बच्चे को वह सहाबी पीठ पर उठा कर ले आते और अपने सामने बिठा लेते थे *(रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने पूछा : "क्या तुम इस से मुहब्बत करते हो? उन्हों ने कहा :" हाँ, ऐ अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम! अल्लाह आप से मुहब्बत फ़र्माये जैसी मैं इस से मुहब्बत करता हूँ :")*

उस बच्चे का इन्तक़ाल हो गया तो उस आदमी का अपने बेटे के ग़म की वजह से रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के पास आना बन्द हो गया, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने जब उन्हें न देखा तो फ़र्माया : "मैं फ़लाँ आदमी को नहीं देख रहा हूँ" सहाबा ने कहा : "उनका बच्चा मर गया है" चुनान्चे रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने उस आदमी से मुलाक़ात करके उस से बच्चे के बारे में मालूम किया तो उन्हों ने बताया कि बच्चे का तो इन्तिक़ाल हो गया है, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने उसे तसल्ली देते हुये फ़रमाया:

"ऐ फ़लाँ! कौन सी सूरत तुम्हें ज़्यादा पसन्द है, यह कि तुम उस से दुनियां की ज़िन्दगी में फ़ाइदा उठाओ, या कल क़यामत के दिन वह बच्चा तुम से आगे बढ़

कर तुम्हारे लिये जन्नत का दर्वाज़ा खोल दे"? उन्हों ने कहा : "ऐ अल्लाह के नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम। यह मुझे ज़्यादा पसन्द है कि वह आगे बढ़ कर मेरे लिये जन्नत का दर्वाज़ा खोल दे," आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया: "यह तेरे लिये हो चुका है"

एक अन्सारी सहाबी ने मालूम किया ऐ अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम! क्या यह उसी के लिये ख़ास है, या हम सब के लिये भी है? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़र्माया:

"तुम सब के लिये है" (नसई, मुस्तदरक हाकिम)

२.) हज़रत अनस बिन मालिक रज़ि॰ कहते हैं कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

"जो अपने मुसलमान भाई की मुसीबत में हमदर्दी ज़ाहिर करता है, अल्लाह तआ़ला क़्यामत के दिन उसे ऐसा लिबास पहनायेगा जिसे देख कर लोग रश्क करेंगे। किसी ने मालूम किया कि "युह्बरु बिहा" से क्या मुराद है ? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया: "जो रश्क के क़ाबिल हो"

(तारीख़े-बग़दाद, तारीख़े-दमिश्क़)

११० मय्यित के घर वालों से इस तरह मुलाक़ात करे जिस से उन को तसल्ली हो और उन के रन्ज व ग़म को हल्का कर दे, अल्लाह की तक़्दीर पर सब्र करने लगें। नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम जिन लफ़्ज़ों के साथ किसी की तअ़ज़ियत करते थे, अगर वह याद न हों, तो जिस तरह भी हो आसानी के साथ तअ़ज़ियत करे, दुरूस्त है। अल्बत्ता शरीअत की मुख़ालिफ़त न करे, जैसा कुछ जाहिल लोग कहते हैं "अल्लाह तुम्हें उस की उम्र दे दे"। तअ़ज़ियत से मुतअल्लिक़ कई हदीसें आई हैं :

१.) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की एक साहब ज़ादी (बेटी) ने पैग़ाम भेजा कि उन की बच्ची या बच्चा मौत और ज़िन्दगी के दर्मियान है (मौत के क़रीब है) इस लिये आप हमारे यहाँ तश्रीफ़ लायें। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने पैग़ाम में सलाम भेज कर फ़र्माया:

"अल्लाह जो भी लेता और देता है, वह उसी का है, हर चीज़ का एक वक़्त तै है, इस लिये सब्र करो और सवाब की उम्मीद रखो" (बुख़ारी, मुस्लिम, नसई)

यह अल्फ़ाज़ अर्गचे मरने के क़रीब वाले के लिये साबित हैं, लेकिन हदीस के माना के लिहाज़ से जो मर चुका हो वुह उन का ज़्यादा हक़-दार है। इमाम नववी रह० "अल्-अज़्कार" में फ़र्माते हैं :

"यह हदीस तअ़ज़ियत के ज़ाहिर करने के लिये बहुत उम्दा है" (अल्-अज़्कार इमाम नववी)

२.) एक अन्सारी औरत के बच्चे की तअ़ज़ियत करते हुये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने उससे कहा:

"मुझे मालूम हुआ है कि तुम ने अपने बच्चे के इन्तिक़ाल पर मातम किया है, फिर आप (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) ने उस को अल्लाह के ख़ौफ़ और सब्र की नसीहत फ़र्माई। उस औरत ने कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम! "मैं क्यों न मातम करूँ जब कि मैं "रक़ूब" हूँ और मेरा सिर्फ़ यही बच्चा था," आप (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) ने फ़र्माया:" रक़ूब-तो वह है जिस का बच्चा बाक़ी रहे" फिर आप (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) ने फ़र्माया : "जिस मुसलमान मर्द या औरत के तीन बच्चे मर जायें और वह अल्लाह से अज्र की उम्मीद रखे, तो अल्लाह तआला उसे उन बच्चों की वजह से जन्नत

में दाखिल कर दे गा,

हज़रत उमर रज़ि० (जो उस वक़्त आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के दायें तरफ़ खड़े थे) आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम से मालूम करना चाहा कि मेरे माँ-बाप आप पर कुर्बान! और दो का क्या हुक्म है? तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़र्माया :

"हाँ, दो के (मरने की) वजह से भी" (मुस्तदरक हाकिम)

३.) हज़रत अबू सलमा रज़ि० की वफ़ात के बाद आप उम्मे सल्मा रज़ि० *(अबू सल्मा की बीवी)* के पास आये और फ़रमाया :

"ऐ अल्लाह। अबू सल्मा को बख़्श दे, नेक लागों में उन का दर्जा ऊँचा कर दे, उन के ख़ान्दान वालों का वाली बन जा। ऐ अल्लाह! हमारी और उन की मग़्फ़िरत फ़रमा दे, उन की क़ब्र को कुशादा कर के नूर से भर दे" (मुस्लिम)

नोट :– पूरी हदीस मस्अला न० १७ में बयान की जा चुकी है, तफ़्सील वहाँ देख सकते हैं।

४.) हज़रत जाफ़र रज़ि० की वफ़ात पर, उन के बेटे अब्दुल्लाह बिन जाफ़र से तअ़्ज़ियत् करते हुये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़र्माया :

"ऐ अल्लाह! जाफ़र के ख़न्दान का मालिक बन जा और अब्दुल्लाह की कमाई में बर्कत दे। (यह बात आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने तीन मर्तबा कही)

(मुस्नद अहमद)

नोट :– मुकम्मल हदीस नीचे मस्अला न० १११ में आ रही है।

१११ "तअ़ज़ियत्" तीन ही दिन तक नहीं है, बल्कि जब भी ज़रुरत **महसूस करें, कर सकता है। नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम से तीन दिन के बाद भी तअ़्ज़ियत् करना साबित है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन जाफ़र रज़ि० बयान फ़रमाते हैं कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि**

में दाख़िल कर दे गा,

हज़रत उमर रज़ि० (जो उस वक़्त आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के दायें तरफ़ खड़े थे) आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम से मालूम करना चाहा कि मेरे माँ-बाप आप पर कुर्बान! और दो का क्या हुक्म है? तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़र्माया :

"हाँ, दो के (मरने की) वजह से भी" (मुस्तदरक हाकिम)

३.) हज़रत अबू सलमा रज़ि० की वफ़ात के बाद आप उम्मे सल्मा रज़ि० *(अबू सल्मा की बीवी)* के पास आये और फ़रमाया :

"ऐ अल्लाह। अबू सल्मा को बख़्श दे, नेक लागों में उन का दर्जा ऊँचा कर दे, उन के ख़ान्दान वालों का वाली बन जा। ऐ अल्लाह! हमारी और उन की मग़्फ़िरत फ़रमा दे, उन की क़ब्र को कुशादा कर के नूर से भर दे" (मुस्लिम)

नोट :– पूरी हदीस मस्अला न० १७ में बयान की जा चुकी है, तफ़्सील वहाँ देख सकते हैं।

४.) हज़रत जाफ़र रज़ि० की वफ़ात पर, उन के बेटे अब्दुल्लाह बिन जाफ़र से तअ़ज़ियत् करते हुये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़र्माया :

"ऐ अल्लाह! जाफ़र के ख़न्दान का मालिक बन जा और अब्दुल्लाह की कमाई में बर्कत दे। (यह बात आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने तीन मर्तबा कही)

(मुस्नद अहमद)

नोट :– मुकम्मल हदीस नीचे मस्अला न० १११ में आ रही है।

१११ "तअ़ज़ियत्" तीन ही दिन तक नहीं है, बल्कि जब भी ज़रुरत महसूस करें, कर सकता है। नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम से तीन दिन के बाद भी तअ़ज़ियत् करना साबित है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन जाफ़र रज़ि० बयान फ़रमाते हैं कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि

वसल्लम ने हज़रत ज़ैद बिन हारिसा की सरदारी में एक लश्कर रवाना किया और फ़र्माया :

"अगर ज़ैद क़त्ल या शहीद हो जायें तो तुम्हारे सर्दार जाफ़र होंगे, और अगर यह भी क़त्ल या शहीद हो जायें तो तुम्हारे अमीर अब्दुल्लाह बिन रवाहा होंगे"

जब दुश्मन से आम्ना-साम्ना हुआ तो हज़रत ज़ैद रज़ि० ने झन्डा संभाला और वह लड़ते हुये शहीद हो गये, फिर झन्डा हज़रत जाफ़र ने संभाला, वह भी लड़ते हुये शहीद हो गये तो झन्डा अब्दुल्लाह ने संभाला, वह भी लड़ते-मारते शहीद हो गये तो झन्डा हज़रत ख़ालिद बिन वलीद रज़ि० ने पकड़ लिया, चुनान्चे अल्लाह तआ़ला ने उनके हाथ पर फ़तह दी। यह ख़बर आने के बाद रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम आ़म लागों में आये और अल्लाह की हम्द व सना के बाद फ़रमाया :

"तुम्हारे भाई दुश्मन से लड़े, ज़ैद झन्डा संभाल कर लड़ते रहे यहाँ तक कि क़त्ल हो कर शहादत पाई, ।. ....फिर (जाफ़र)........फिर (अब्दुल्लाह)........फिर झन्डा ख़ालिद बिन वलीद के हाथ में आया और अल्लाह तआ़ला ने उन के ज़रीआ फ़त्ह अ़ता फ़र्माई"

फिर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम तीन दिन तक आले जाफ़र के यहाँ जाने से रुके रहे, तीन दिन के बाद उन के पास तशरीफ़ ले गये और फ़र्माया :

"आज के बाद मेरे भाई को न रोना"

आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने कहा: मेरे भतीजे को बुलाओ। हज़रत अब्दुल्लाह बिन जाफ़र बयान करते हैं कि जब हम आप की ख़िदमत में हाज़िर हुये तो बहुत छोटे थे, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया : "हज्जाम को बुलाओ" उस ने आ कर हमारे सर मूंड दिये, फिर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

"मुहम्मद! तू हमारे चचा अबू तालिब का हम्-शक्ल है और अब्दुल्लाह शक्ल और अख़्लाक़ में मुझ से मिलता जुलता है, उस वक़्त आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने मेरा हाथ उठा कर के दुआ फ़र्माई

"ऐ अल्लाह! जाफ़र के खन्दान का वाली बन जा, अब्दुल्लाह के हाथ (कमाई) में बर्कत दे, यह बात आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने तीन मर्तबा दुहराई"

फिर हमारी वालिदा आयीं और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम से हमारी यतीमी का ज़िक्र और अपना रन्ज व ग़म आप से बयान करने लगीं तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़र्माया :

"तुम्हें इन की ग़रीबी की फ़िक्र है ? इन का तो मैं खुद दुनिया व आख़िरत में वली हूँ" (मुस्नद अहमद)

११२ दो बातों से बचना चहिये, अगर्चे अक्सर लोग इन दोनों कामों को करते हैं।

१.) किसी ख़ास जगह पर तअ़्ज़ियत के लिये अकट्ठा होना जैसे क़ब्रस्तान, घर, मस्जिद वग़ैरह

२.) तअ़्ज़ियत् करने वालों के लिये खाने पीने का इन्तज़ाम करना। हज़रत जरीर बिन अब्दुल्लाह बुजली रज़ि० फ़रमाते हैं :

"मय्यित के घर में इकट्ठा होने, दफ़्न के बाद खाना तैयार करने को हम लोग "नियाहा" में शुमार करते थे" (मुस्नद अहमद, इब्ने माजा)

नोट :– "नियाहा" के बारे में देखें मस्अलस नं. २२

इमाम नववी रह० फ़र्माते हैं :

"तअ़्ज़ियत" के लिये बैठने को इमाम शाफ़ई और दूसरे बहुत सारे आलिमे-दीन ना पसन्द फ़र्माते हैं। उन का कहना है कि तअ़्ज़ियत के लिये इस शक्ल में बैठना मना है कि मय्यित के रिश्तेदार एक जगह इकट्ठा हो जायें और जो तअ़्ज़ियत करना चाहे उन

के पास पहुँच जाये। उन की राय है कि मय्यित के रिश्तेदारों को अपने कामों में लग जाना चाहिये, जो उन से मिले तअ़ज़ियत कर ले। तअ़ज़ियत की ख़ातिर औरतों और मर्दों का इकट्ठा होना, इसकी कराहियत में कोई फ़र्क नहीं" (अल्-मज्मूअ़)

जिस बात की तरफ़ इमाम नववी ने इशारा किया है, इमाम शाफ़ई रह० ने भी यह बात अपनी किताब "किताबुल् उम्म" में फ़रमाई है। लिखते हैं :

"अफ़्सोस को ज़ाहिर करने के लिये इकट्ठा होना मक्रूह है, अगर्चे उस में रोना चिल्लाना न हो, इस लिये कि यह ग़म को ताज़ा करता है और ख़र्च अलग होता है। इस सिलसिले में एक सहाबी की राय भी गुज़र चुकी है"

इमाम नववी रह० फ़रमाते हैं कि मुसन्निफ़ और दूसरे उलमा ने इस बात से दलील क़ायम की है कि यह तरीक़ा बाद की ईजाद है। (यानी बिद्अत है)

ऐसा ही हुक्म इब्ने हुमाम ने लगाया है, यानी मय्यित के घराने की तरफ़ से मेहमान-दारी का खाना मक्रूह है और इसे बहुत बड़ी बिद्अ़त कहा है *(हिदाया, जिल्द अव्वल)*

इमाम अहमद बिन हम्बल रह० के मस्लक के उलमा का भी यही फ़त्वा है *(अल्-इन्साफ़)*

११३ सुन्नत यह है कि मय्यित के घर वालों के लिये रिश्तेदार और पड़ोसी खाने का इन्तिज़ाम करें। हज़रत जअ़फ़र वाली हदीस में है कि जब हज़रत जअ्फ़र रज़ि० की शहादत की ख़बर आई तो नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़र्माया :

"आले जअ़फ़र के लिये खाना तैयार करो, उन के पास ऐसी ख़बर आई है जिस ने उन्हें मशग़ूल कर दिया है

(अबू दावूद, तिर्मिज़ी)

हज़रत इमाम शाफ़ई रह० फ़र्माते हैं :

"मैं मय्यित के पड़ोसियों और रिश्तेदारों का यह काम पसन्द करता हूँ कि वह एक दिन रात का खाना अहले मय्यित के लिये तैयार करें। यह सुन्नत भी है और अच्छा काम भी। जो लोग यह काम करें हम भी कुबूल करते हैं और बाद वाले भी कुबूल करें गे, फिर हज़रत जाफ़र वाली हदीस बयान फ़रमाई (किताबुल-उम्म, भाग १)

११४ यतीम के सर पर हाथ फेरना और शफ़्क़त व मेहर्बानी करना मुस्तहब है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन जअ़फ़र बयान फ़रमाते हैं :

"मैं कुसम और उबैदुल्लाह बिन अब्बास छोटे बच्चे थे, हम लोग खेल रहे थे कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम अपनी सवारी पर गुज़रे, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने मेरी तरफ़ इशारा कर के कहा कि इसे उठा दो, फिर मुझे अपने आगे बिठा लिया। कुसम के बारे में भी कहा कि इसे भी उठा दो, चुनान्चे उस को पीछे बिठा लिया (जब कि उबैदुल्लाह हज़रत अब्बास को कुसम से ज़्यादा महबूब थे) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने अपने चचा के जज़्बे का भी ख़्याल न किया (कि कुसम को उठा लिया और उबैदुल्लाह को छोड़ दिया) फिर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने तीन मर्तबा मेरे सर पर हाथ फेरा और हर बार यह फ़र्माया : "ऐ अल्लाह! जअ़फ़र की औलाद का वली बन जा" रिवायत करने वाले कहते हैं कि मैंने हज़रत अब्दुल्लाह से पूछा कि कुसम क्या हुआ? कहा कि शहीद हो गया, मैं ने कहा: "अल्लाह और उस का रसूल भलाई को बेहतर जानते हैं," आप ने कहा, "हाँ" "हाँ"

(मुस्नद अहमद, सुनने कुब्रा, मुस्तदरक हाकिम)

हज़रत इमाम शाफ़ई रह० फ़र्माते हैं :

"मैं मय्यित के पड़ोसियों और रिश्तेदारों का यह काम पसन्द करता हूँ कि वह एक दिन रात का खाना अहले मय्यित के लिये तैयार करें। यह सुन्नत भी है और अच्छा काम भी। जो लोग यह काम करें हम भी क़ुबूल करते हैं और बाद वाले भी क़ुबूल करें गे, फिर हज़रत जाफ़र वाली हदीस बयान फ़रमाई (किताबुल-उम्म, भाग १)

११४ यतीम के सर पर हाथ फेरना और शफ़्क़त व मेहर्बानी करना मुस्तहब है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन जअ़फ़र बयान फ़रमाते हैं :

"मैं क़ुसम और उबैदुल्लाह बिन अब्बास छोटे बच्चे थे, हम लोग खेल रहे थे कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम अपनी सवारी पर गुज़रे, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने मेरी तरफ़ इशारा कर के कहा कि इसे उठा दो, फिर मुझे अपने आगे बिठा लिया। क़ुसम के बारे में भी कहा कि इसे भी उठा दो, चुनान्चे उस को पीछे बिठा लिया (जब कि उबैदुल्लाह हज़रत अब्बास को क़ुसम से ज़्यादा महबूब थे) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने अपने चचा के जज़्बे का भी ख़्याल न किया (कि क़ुसम को उठा लिया और उबैदुल्लाह को छोड़ दिया) फिर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने तीन मर्तबा मेरे सर पर हाथ फेरा और हर बार यह फ़र्माया : "ऐ अल्लाह! जअ़फ़र की औलाद का वली बन जा" रिवायत करने वाले कहते हैं कि मैंने हज़रत अब्दुल्लाह से पूछा कि क़ुसम क्या हुआ? कहा कि शहीद हो गया, मैं ने कहा: "अल्लाह और उस का रसूल भलाई को बेहतर जानते हैं," आप ने कहा, "हाँ" "हाँ"

(मुस्नद अहमद, सुनने कुब्रा, मुस्तदरक हाकिम)

वह काम, जिन से मय्यित को फ़ाइदा पहुँचता है

११५ मय्यित को दूसरों के कई एक कामों से फ़ाइदा पहुँचता है।

(१) *किसी मुसलमान का मय्यित के हक़ में दुआ करना, जब कि कुबूल होने की तमाम शर्तें मुकम्मल हों। अल्लाह अताला का इर्शाद है:*

"और वह लोग जो अगलों के बाद आये हैं कहते हैं कि ऐ हमारे रब, हमें और हमारे उन सब भाइयों को बख़्श दे जो हम से पहले ईमान लाये हैं, और हमारे दिलों में ईमान वालों के लिये कोई कीना न रख। ऐ हमारे रब तू बड़ा मेहरबान और रहीम है"

(सूर: हश्र, आय: १०)

इस बारे में बहुत सी हदीसें हैं, जिन में से कुछ पहले बयान हो चुकी हैं, बाक़ी "ज़ियारतुल-कुबूर" के बाब में बयान हों गी। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने मुर्दों के हक़ में दुआ फ़र्माई और दूसरों को भी दुआ करने का हक़ देते हुये फ़र्माया :

"एक मुसलमान जब अपने भाई की ग़ैर मौजूदगी में उस के लिये दुआ करता है तो वह कुबूल होती है। हर आदमी के पास एक निगरानी करने वाला फ़रिश्ता आमीन कहता है, और कहता है कि तुझे भी ऐसा ही मिले"। (मुस्लिम,अबू दावूद)

बल्कि अगर देखा जाये तो जनाज़ा का बड़ा हिस्सा इस बात की दलील है, इस लिये कि ज़्यादा तर उस में मय्यित के लिये दुआ व इस्तिग़फ़ार

होता है जिस की तफ़्सीलात ऊपर गुज़र चुकी हैं।

२.) मय्यित के क़रीबी रिश्तेदार का मय्यित की तरफ़ से रोज़े की क़ज़ा देना : इस के तअल्लुक़ से कई हदीसें मौजूद हैं।

हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि० बयान फ़रमाती हैं कि रसूले मक़्बूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़र्माया :

"जो आदमी मर जाये और उस के ज़िम्मे रोज़े हों तो उस का क़रीबी रिश्ते दार रोज़े रखे"

(बुख़ारी, मुस्लिम)

नोट :– इस हदीस से मुराद नज़्र के रोज़े हैं, रमज़ान के फ़र्ज़ रोज़े नहीं। इस की तफ़्सील अस्ल किताब "अहकामुल-जनायज़" में मौजूद है। हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० बयान करते हैं:

"एक औरत ने समुन्दर के किसी सफ़र पर रवाना होते हुये यह नज़्र मानी कि अगर अल्लाह तआ़ला ने सहीह सलामत पार लगा दिया तो एक माह के रोज़े रखू गी। अल्लाह तआ़ला ने उसे ख़ैरियत से पहुँचा दिया लेकिन वह मरते समय तक रोज़े न रख सकी। उस औरत के किसी क़रीबी रिश्तेदार (बहन, बेटी) ने रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के पास जा कर सारी कहानी सुनाई तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया : "तेरा क्या ख़्याल है अगर उस के ज़िम्मे क़र्ज़ होता तो तू उसे अदा करती या नहीं ? उस ने कहा हाँ (अदा करती) आप ने फ़रमाया : "अल्लाह का क़र्ज़ तो सब से पहले अदा करना चाहिये, इस लिये अपनी माँ के रोज़े की क़ज़ा करो" (अबू दावूद)

३.) क़रीबी रिश्तेदार या किसी दूसरे की तरफ़ से क़र्ज़ अदा कर देना

(इस मस्अले के लिये देखें मस्अला न० १७)

४.) नेक बच्चा जो भी काम करेगा उस के माँ-बाप को उतना ही

सवाब मिले गा जितना उस बच्चे को मिले गा, और उस बच्चे के सवाब में भी कोई कमी न आये गी, इस लिये कि बच्चा माँ-बाप की कोशिश का नतीजा है। अल्लाह तआला का फ़र्मान है :

"इन्सान के लिये कुछ नहीं है मगर वह जिस की उसने कोशिश की हो" (सूरः नज्म, आयः ३९)

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का इर्शाद है :

"सब से पाक खाना आदमी की अपनी कमाई है और उस की औलाद उस की कमाई में शामिल है"

(अबू दावूद, तिर्मिज़ी)

ऊपर की आयत और हदीस की ताईद दूसरी और भी हदीसों से होती है, जिन में यह बयान है कि बाप को अपने बच्चे के नेक काम से फ़ाइदा होता है, जैसे सद्क़ा करना, रोज़े रखना, गुलाम आज़ाद करना। इस तअल्लुक़ से चन्द हदीसें बयान की जाती हैं। हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि० बयान फ़रमाती हैं :

"एक आदमी ने कहा कि मेरी माँ अचानक दुनिया से चली गई और कोई वसिय्यत भी न कर सकी, मेरा ख़्याल है कि अगर बोलती तो सद्क़ा करती, अगर मैं सद्क़ा कर दूँ तो क्या उसे सवसाब मिले गा और मुझे भी मिलेगा? रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया : हाँ (दोनों को सवाब मिलेगा) तो उस ने अपनी माँ की तरफ़ से सदक़ा किया"

(बुख़ारी, मुसिलिम)

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० कहते हैं कि आ़स बिन वायल् सहमी ने वसिय्यत की कि उस की तरफ़ से सौ गुलाम आज़ाद कर दिये जायें। उन के बेटे हिशाम ने पचास गुलाम आज़ाद कर दिये, उन के बेटे अ़मर ने बाकी पचास गुलाम आज़ाद करने का इरादा किया। उन्होंने सोचा कि सब से पहले रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम से पूछ

लूँ, चुनान्चे उन्हों ने रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के पास जा कर मालूम किया कि मेरे बाप ने सौ गुलाम आज़ाद करने की वसिय्यत की थी। हिशाम ने अपनी तरफ़ से पचास आज़ाद दिये, अब उन के ज़िम्मे पचास बाक़ी हैं, क्या मैं उन की तरफ़ से अदा कर दूँ? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया :

"अगर वह मुसलमान होता फिर तुम उस की तरफ़ से गुलाम आज़ाद करते, या हज करते तो सब का सवाब उसे मिल जाता" (एक दूसरी रिवायत में है कि अगर वह तौहीद वाला होता तो तुम्हारे रोज़े और सदक़े से उसे फ़ाइदा पहुचँता) (अबू दावूद)

५.) जो कोई अच्छे काम करे, या अपने बाद हमेशा रहने वाले नेक काम छोड़ दे (मरने के बाद उन कामों का अज्र व सवाब उसे मिलता रहे गा) अल्लाह तआला का इर्शाद है :

"जो कुछ उन्हों ने किया है वह सब हम लिख रहे हैं, और जो कुछ आसार उन्हों ने पीछे छोड़े हैं वह भी नोट कर रहे हैं (सूरः यासीन, आयः १२)

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का इर्शाद है:

"जब इन्सान मर जाता है तो तीन चीज़ों के अलावा उस का आमाल-नामा बन्द कर दिया जाता है (१) जारी रहने वाला नेक काम (२) ऐसा इल्म जिस से लोग फ़ाइदा इठायें (३) नेक बच्चा जो उस के लिये दुआयें करे" (मुस्लिम)

हज़रत जरीर बिन अब्दुल्लाह रज़ि० रिवायत करते हैं कि दिन के शुरु के हिस्से में हम रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के पास बैठे हुये थे, इतने में कुछ लोग इस हाल में आयेजिन केपाँव और जिस्म नन्गे थे, बस चादरें और तल्वारें लटक रही थीं, उन में से ज़्यादातर लोग 'मुज़र' ख़ान्दान के थे, उन की बद-हाली देख कर रसूलुल्लाह

सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का चेहरे का रंग बदल गया, घर में जा कर फ़ौरन वापस आ गये, हज़रत बिलाल रज़ि० को अज़ान का हुक्म दिया, जुह्र की नमाज़ पढ़ कर आप छोटे मिम्बर पर चढ़ गये, फिर अल्लाह की हम्द व सना बयान करते हुये फ़र्माया : अम्मा बाद, अल्लाह तआ़ला ने अपनी किताब में नाज़िल फ़रमाया है :

"लोगो! अपने रब से डरो, जिस ने तुम को एक जान से पैदा किया है और उसी जान से उस का जोड़ा बनाया और उन दोनों से बहुत सारे मर्द व औरतें दुनिया में फैला दिये, उस ख़ुदा से डरो जिस का वास्ता दे कर तुम एक दूसरे से अपना हक़ माँगते हो, और रिश्ता व नाता को बिगाड़ने से परहेज़ करो, यक़ीन जानो कि अल्लाह तआ़ला तुम पर निगरानी कर रहा है"

(सूरः निसा, आयः १,२)

फिर इस के बाद दूसरी आयः सूरः हश्र की तिलावत फ़र्माई :

"ऐ ईमान वालो! अल्लाह से डरो और हर शख़्स यह देखे कि उस ने कल के लिये क्या सामान किया है? अल्लाह से डरते रहो, अल्लाह बेशक तुम्हारे उन सब आमाल को जानने वाला है जो तुम करते हो। उन लोगों की तरह न हो जाओ जो अल्लाह को भूल गये तो अल्लाह ने उन्हें उन का अपना नफ़्स भुला दिया, यह लोग फ़ासिक़ हैं। दोज़ख में जाने वाले और जन्नत में जाने वाले कभी बराबर नहीं हो सकते। जन्नत में जाने वाले ही अस्ल में कामियाब हैं

(सूरः हश्र, आयः१८, १९, २०)

"उस वक्त से पहले सदक़ा करो, जब तुम्हारे और सदक़े के बीच में मौत आड़े आ जाये, आदमी को दीनार, दिरहम, कपड़े या एक किलो गेहूँ या खजूर सदक़ा कर

लेना चाहिये, (आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने यहाँ तक फ़र्माया कि आदमी को खजूर के एक हिस्से का सदक़ा करना भी मामूली नहीं समझना चाहिये"

सहाबा ने कुछ देर कर दी तो आप के चेहरे से नाराज़गी ज़ाहिर होने लगी। अचानक एक अन्सारी सोने या चाँदी की थैली ले आये जो उन के हाथ से सँभाली नहीं जाती थी, बल्कि उन के हाथ से बे क़ाबू हो गई। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने आगे बढ़ कर उसे थाम लिया, उस वक़्त आप मिम्बर पर थे। उन्होंने कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल! (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) यह अल्लाह की राह में हैं, आप (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) ने उसे कुबूल फ़र्माया लिया। फिर अबू बक्र रज़ि० ने कुछ दिया, फिर उमर ने भी कुछ दिया, फिर बाक़ी मुहजिर और अन्सार उठे और उन्हों ने दिया, फिर और लोगों ने सद्क़ा किया। कोई दीनार दे रहा है था, कोई दिरहम दे रहा था और जिस के पास जो था हिस्सा डाल रहा था, यहाँ तक कि कपड़े और खाने पीने के दो ढेर देखे और यह भी देखा कि रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का चेहरा सोने की तरह दमक रहा था। उस मौक़े पर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़र्माया :

"जिस ने इस्लाम में कोई अच्छा तरीक़ा निकाला उस के लिये उस का अपना सवाब हो गा और उस आदमी का भी अज्र जो बाद में उस पर अमल करे गा, बाद में करने वालों के सवाब में कोई कमी भी न होगी। जिस ने इस्लाम में बुरा तरीक़ा ईजाद किया उसे अपना भी गुनाह मिले गा और बाद में उस पर अमल करने वालों का भी, बाद में करने वालों के गुनाहों में कमी न होगी। फिर आप (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) ने यह आय: तिलावत फ़र्माई : "जो कुछ काम उन्हों ने किये वह सब हम लिख रहे हैं और जो कुछ अपने

पीछे निशानियाँ छोड़ी हैं वह भी नोट कर रह हैं"
फिर नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने वह सदक़े के माल उन *(कबीला मुज़र के फ़कीरों में)* बाँट दिया। *(मुस्लिम, बैहक़ी)*

क़ब्रस्तान की ज़ियारत

११६ नसीहत और आख़िरत की याद को ताज़ा करने के लिये क़ब्रस्तान की ज़ियारत सुन्नत है, इस शर्त के साथ कि वहाँ कोई ऐसा काम न हो जो अल्लाह की नाराज़्गी का सबब बन जाये। जैसे: क़ब्र वालों से दुआयें माँगना, अल्लाह की जगह उन से मदद माँगना, या क़ब्र वालों की ख़ाह-मख़ाह तारीफ़ करना, या उन के जन्नती होने का दावा करना, वग़ैरह। इस मस्अले के तअल्लुक़ से बहुत सी हदीसें हैं *(देखें हमारी किताब "अहकामुल-जनायज़")*

११७ औरतों के लिये मर्दों की तरह क़बरों की ज़ियारत मुस्तहब है। इस की कई दलीलें हैं।

१.) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का फ़र्मान "क़ब्रों की ज़ियारत किया करो" आ़म है, इस हुक्म में औरतें भी शामिल हैं, इस की तफ़्सील यूँ है कि शुरु में जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने क़ब्रों की ज़ियारत से मना किया था, तो बेशक इस मना के हुक्म में मर्द और औरत दोनों शामिल थे, इस मौक़े पर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इस तरह फ़र्माया था

"मैं ने तुम्हें क़ब्रों की ज़ियारत से मना किया था"

इस के माने यह हुये कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने शुरु में दोनों जिन्स *(मर्द, औरत)* को क़ब्रों की ज़ियारत से मना फ़र्मा दिया था, यह बात साफ़ ज़ाहिर है, तो दूसरे जुम्ले *(वाक्य)* में भी आप ने दोनों जिन्सों *(मर्द, औरत)* को इजाज़त देते हुये फ़र्माया :

"अब ज़ियारत किया करो (मुस्नद अहमद)

इस बात की ताईद इस बात से होती है कि ऊपर की रिवायत में नीचे

क़ब्रस्तान की ज़ियारत

११६ नसीहत और आख़िरत की याद को ताज़ा करने के लिये क़ब्रस्तान की ज़ियारत सुन्नत है, इस शर्त के साथ कि वहाँ कोई ऐसा काम न हो जो अल्लाह की नाराज़्गी का सबब बन जाये। जैसे: क़ब्र वालों से दुआयें माँगना, अल्लाह की जगह उन से मदद माँगना, या क़ब्र वालों की ख़ाह-मख़ाह तारीफ़ करना, या उन के जन्नती होने का दावा करना, वग़ैरह। इस मस्अले के तअल्लुक़ से बहुत सी हदीसें हैं *(देखें हमारी किताब "अहकामुल-जनायज़")*

११७ औरतों के लिये मर्दों की तरह क़बरों की ज़ियारत मुस्तहब है। इस की कई दलीलें हैं।

१.) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का फ़र्मान "क़ब्रों की ज़ियारत किया करो" आ़म है, इस हुक्म में औरतें भी शामिल हैं, इस की तफ़्सील यूँ है कि शुरु में जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने क़ब्रों की ज़ियारत से मना किया था, तो बेशक इस मना के हुक्म में मर्द और औरत दोनों शामिल थे, इस मौक़े पर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इस तरह फ़र्माया था

"मैं ने तुम्हें क़ब्रों की ज़ियारत से मना किया था"

इस के माने यह हुये कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने शुरु में दोनों जिन्स *(मर्द, औरत)* को क़ब्रों की ज़ियारत से मना फ़र्मा दिया था, यह बात साफ़ ज़ाहिर है, तो दूसरे जुम्ले *(वाक्य)* में भी आप ने दोनों जिन्सों *(मर्द, औरत)* को इज़ाज़त देते हुये फ़र्माया :

"अब ज़ियारत किया करो (मुस्नद अहमद)

इस बात की ताईद इस बात से होती है कि ऊपर की रिवायत में नीचे

बयान किये गये अहकाम का भी ज़िक्र है
क़ुर्बानी के गोश्त को तीन दिन से ज़्यादा रोक रखने से मना किया था मश्कीज़े के अलावा नबीज़ से मना किया था। अब हर तरह के बर्तनों में पी सकते हैं, इस शर्त के साथ कि नशा न हो.

मैं कहता हूँ कि यह हुक्म दोनों *(मर्द, औरत)* के लिये था, जैसा कि "कुन्तु नहैतुकुम" *(मैं ने तुम्हें मना किया था)* वाले हुक्म का हाल है। अगर यह कहा जाये कि "फ़ज़ूरुहा" *(अब तुम सब ज़ियारत किया करो)* में मुख़ातब सिर्फ़ मर्द ही हैं, तो नज़्मे कलाम बिगड़ जाता है और उस की चाशनी ख़त्म हो जाती है। इस तरह की बात वह ज़ात नहीं कर सकती जिसे "जवामिउल्-कलिम्" दिये गये हों, और जो "ज़्वाद" का हर्फ़ बोलने वालों में ज़ुबान का फ़सीह हो। इस राय की ताईद नीचे की बातें भी करती हैं :

२.) जिस वजह से क़ब्र की ज़ियारत मस्नून कही गई है, औरतें भी उसमें शामिल हैं, हदीस के अल्फ़ाज़ यह हैं :

> *"क्यों कि क़ब्रस्तान की ज़ियारत दिल को नर्म करती है, आँखों से आँसू बहाती है और आख़िरत को याद दिलाती है"*

३.) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने ख़ास कर औरतों को क़ब्र के ज़ियारत की इजाज़त दी है। इस मस्अला के तअ़ल्लुक़ से दो हदीसें हज़रत आइशा रज़ि० बयान करती हैं :

> ***पहली हदीस :*** *हज़रत अब्दुर्रहमान बिन अबू मुलैना कहते हैं: हज़रत आइशा रज़ि० एक दिन क़ब्रस्तान से वापस आयीं तो मैं ने पूछा "आप कहाँ से आ रही हैं? उन्हों ने फ़र्माया : "अब्दुर्रहमान बिन अबू बक्र के क़ब्र से" (यह हज़रत आइशा रज़ि० के भाई थे) मैं ने कहा : "क्या रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने (औरतों को) क़ब्र की ज़ियारत से मना*

किया था"? हज़रत आइशा ने फ़रमाया : हाँ, लेकिन बाद में जाने का हुक्म भी दिया था"

(मुस्तदरक हाकिम, इब्ने माजा)

दूसरी हदीस : हज़रत आइशा रज़ि० फ़र्माती हैं कि एक रोज़ मेरी बारी पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम मेरे यहाँ थे, घर पहुंच कर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने अपनी चादर रख दी, जूते भी उतार कर पाँव के पास रख दिये और अपनी चादर का एक हिस्सा बिछाकर लेट गये, थोड़ी देर बाद जब आप को अन्दाज़ा हुआ कि मैं सो चुकी हूँ तो आहिस्ता से चादर उठाई, चुपके से जूते पहने, दर्वाज़ा खोल कर निकल गये और आहिस्ता से दर्वाज़ा बन्द कर दिया।

मैंने भी ओढ़ने की चादर सर पर रखी और तैयार हो गई, फिर मैं आप के पीछे-पीछे चली यहाँ तक कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम "बक़ीअ़" (क़ब्रस्तान) में तश्रीफ़ लाये, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम देर तक ठहरे रहे, फिर आप ने तीन मर्तबा हाथ उठा कर दुआ की, जब आप पल्टे तो मैं भी पलट पड़ी, आप ने क़दम तेज़ किये तो मैं भी तेज़ हो गई, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने भागना शुरु किया तो मैं भी दौड़ने लगी, आप भी पहुंचे, मैं भी पहुंच गई लेकिन ज़रा पहले, अभी मैं लेटी ही थी कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम भी पहुंच गये और पूछा, आइश (हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रजि० का लाडला नाम) सांस क्यों फूल रहा है? मैं ने कहा! कोई बात नही. आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

"पता हो तो ठीक है, वर्ना अल्लाह तआला जान्ने वाला ख़बर रखने वाला है, वह बता दे गा।

(हज़रत आइशा रज़ि० कहती हैं) मैं ने कहा: "मेरे माँ-बाप आप पर निछावर," फिर मैं ने सारी बात बता दी, तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़र्माया : "वह काला सा साया मेरे आगे तू ही थी?" मैं ने कहा! हाँ, फिर आपने मेरे सीने पर ज़ोर दार हाथ मारा जिस से मुझे तक्लीफ़ हुई, फिर फ़र्माया: "तुम्हारा क्या ख़्याल है कि अल्लाह का रसूल तुम्हारे साथ ना-इन्साफ़ी करें गे? हज़रत आइशा ने कहा : "लोग कितना भी छुपाते हैं अल्लाह तो जानता ही है," आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़र्माया : "हाँ, फिर आप ने बयान फ़र्माया : "जब तुम ने देखा उस वक़्त जिब्रील अमीन (अलै०) आये थे, उन्होंने मुझे घीरे से बुलाया ताकि तुम्हें मालूम न हो, मैं ने भी घीरे से जवाब दिया ताकि तुम्हें ख़बर न हो। वह तुम्हारे पास नहीं आ सकते थे, इस लिये कि तुम ने कपड़े उतार लिये थे, मेरा ख़्याल था कि तुम सो चुकी हो, तुम्हें जगाना मैं ने पसन्द न किया, मुझे डर था कि तुम ख़ौफ़ करोगी, जिब्रील अमीन ने आ कर कहा कि तुम्हारे रब का हुक्म है कि "बक़ीअ्" (क़ब्रस्तान) में जा कर उन के हक़ में मग़्फ़िरत की दुआ करो," हज़रत आइशा बयान करती हैं कि मैं ने पूछा कि ऐ अल्लाह के रसूल! ऐसे मौक़ा पर उन के लिये क्या कहा करूँ? आप ने फ़र्माया: तुम यह कहा करो:

अस्सलामु अ़ला अह्लिद्दियारि मिनल् मोमिनी-न वल्-मुस्लिमी-न, व यर्‌ ह-मल्लाहु-ल्

मुस्तकदिमी–न मिन्ना वल् मुस्तअ्ख़िरी–न,
व इन्ना इन् शाअल्लाहु बिकुम् ल–ला हिकू–न

(मोमिन और मुसलमान घर वालों पर अल्लाह की रहमत और सलामती हो, अल्लाह तआला अगलों और पिछलों पर रहमत फ़रमाये, हम भी अल्लाह ने चाहा तो तुम्हारे पास पहुंचने वाले हैं) (मुस्लिम, नसई, मुस्नद हम्बल)

११८ औरतों को बहुत ज़्यादा और बार-बार क़ब्रस्तान ज़ियारत के लिये जाना जायज़ नहीं, इस लिये कि हो सकता है कि वुह शरीअत के अहकाम की ख़िलाफ़ वर्ज़ी करने लगें। मिसाल के तौर पर चीख़ना, चिल्लाना, बे पर्दा होना, क़ब्रसतान को घूमने फिरने की जगह बना लेना और फ़ुज़ूल बातों में वक़्त बर्बाद करना, जैसा कि कुछ इस्लामी मुल्कों में देखा जा रहा है। नीचे की हदीस का यही मतलब है जिस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़र्माया:

"अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने बहुत ज़्यादा क़ब्रस्तान की ज़ियारत करने वालियों पर लानत फ़र्माई है" (एक रिवायत में है कि) अल्लाह ने लानत भेजी है" (तिर्मिज़ी)

इमाम कुर्तुबी रह० फ़रमाते हैं :

"ऊपर की हदीस में लानत सिर्फ़ बहुत ज़्यादा ज़्यारत करने वाली औरतों के लिये है जैसा कि मुबालग़ा के सेग़ा से समझ में आता है। शायद यह हुक्म इस लिय है कि इस वजह से शौहर के हुक़ूक़ पामाल होते हैं, बे पदर्गी भी होती है, और औरतों की तरफ़ से चीख़ना चिल्लाना भी पैदा होता है"

कुछ लोगों का कहना है कि जब ऐसी बातों का डर न हो, तो औरतों को आ़म इजाजत देने में कोई हर्ज नहीं, इस लिये कि क़ब्रस्तान की

मुस्तकदिमी–न मिन्ना वल् मुस्तअ्खिरी–न,
व इन्ना इन् शाअल्लाहु बिकुम् ल–ला हिकू–न

(मोमिन और मुसलमान घर वालों पर अल्लाह की रहमत और सलामती हो, अल्लाह तआला अगलों और पिछलों पर रहमत फ़रमाये, हम भी अल्लाह ने चाहा तो तुम्हारे पास पहुंचने वाले हैं) (मुस्लिम, नसई, मुस्नद हम्बल)

११८ औरतों को बहुत ज़्यादा और बार-बार क़ब्रस्तान ज़ियारत के लिये जाना जायज़ नहीं, इस लिये कि हो सकता है कि वुह शरीअत के अहकाम की ख़िलाफ़ वर्ज़ी करने लगें। मिसाल के तौर पर चीख़ना, चिल्लाना, बे पर्दा होना, क़ब्रसतान को घूमने फिरने की जगह बना लेना और फुज़ूल बातों में वक़्त बर्बाद करना, जैसा कि कुछ इस्लामी मुल्कों में देखा जा रहा है। नीचे की हदीस का यही मतलब है जिस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़र्माया:

"अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने बहुत ज़्यादा क़ब्रस्तान की ज़ियारत करने वालियों पर लानत फ़र्माई है" (एक रिवायत में है कि) अल्लाह ने लानत भेजी है" (तिर्मिज़ी)

इमाम क़ुर्तुबी रह० फ़रमाते हैं :

"ऊपर की हदीस में लानत सिर्फ़ बहुत ज़्यादा ज़्यारत करने वाली औरतों के लिये है जैसा कि मुबालग़ा के सेग़ा से समझ में आता है। शायद यह हुक्म इस लिय है कि इस वजह से शौहर के हुकूक़ पामाल होते हैं, बे पदर्गी भी होती है, और औरतों की तरफ़ से चीख़ना चिल्लाना भी पैदा होता है"

कुछ लोगों का कहना है कि जब ऐसी बातों का डर न हो, तो औरतों को आ़म इजाजत देने में कोई हर्ज नहीं, इस लिये कि क़ब्रस्तान की

ज़ियारत मौत को याद दिलाती है, जिस के औरत मर्द सब ज़रुरत-मन्द हैं

इमाम शैकानी रह० फ़रमाते हैं :

"तमाम हदीसों में मुताबिक़त पैदा करने के लिये इस राय पर भरोसा करना ज़्यादा बहतर है

(नैलुल् औतार जिल्द २)

११६ इबरत व नसीहत करने की ग़रज़ से ग़ैर-मुस्लिम के क़ब्र की ज़ियारत जायज़ है। हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० बयान फ़रमाते हैं

"रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम अपनी वालिदा (आमिना) की क़ब्र पर गये, खुद भी राय और आस-पास को भी रुला दिया, फिर फ़र्माया : "मैं ने अपने रब से अपनी माँ के हक़ में इस्तिगफ़ार की इजाज़त चाही लेकिन न मिली, फिर क़ब्र की ज़ियारत के लिये इजाज़त चाही तो इजाज़त मिल गई, चुनान्चे क़ब्रों की ज़ियारत करते रहा करो, यह मौत को याद दिलाती है। (मस्लिम,अबू दावूद,नसई)

ज़ियारत के दो फ़ाइदे हैं

(१) ज़ियारत करने वाला मौत और मुर्दों को याद करके फ़ाइदा उठाता है और अन्जाम, जन्नत, दोज़ख़ को याद करता है। ज़ियारत का सब मे बड़ा फ़ाइदा यही है जैसा कि ऊपर की हदीसों से ज़ाहिर है।

(२) मय्यित को ज़ियारत करने वालों के सलाम, दुआ, इस्तिग़फ़ार करने से फ़ाइदा होता है, लेकिन यह सिर्फ़ मुसलमान मय्यित के लिये है। इस के तअ़ल्लुक़ से कई हदीसें हैं, चन्द हदीसों के अल्फ़ाज़ यूँ हैं।

(१) ***अस्सलामु अ़लैकुम् दा-र क़ौमिम् मोमिनी-न व इन्ना व इय्याकुम् व मा तू-अद्-न ग-दन्***

मु–अज्जलू–न व इन्ना इन् शाअल्लाहु बिकुम् लाहिकू–न. अल्लाहुम्–मग् फिर लि–अह्लि बकीइल् गर–कदि

"मौमिन कौम के घर वालो! तुम पर सलामती हो, हमें और तुम्हें जिस कल का वाइदा मिला है उस वक़्त तक हम और तुम मुहलत में हैं, और हम भी अल्लाह ने चाहा तो तुम से मिलने वाले हैं। ऐ अल्लाह! "बक़ीउल् ग़रक़द्" वालों की मग़्फ़िरत फ़रमा दे"

(मुस्लिम शरीफ़)

(२) ***अस्सलामु अला अह्लिद्दयारि मिनल् मुअ्मिनी–न वल मुस्लिमी–न व यर हमुल्लाहुल् मुस्–तक दिमी–न मिन्ना वल् मुस्–तअ्खिरी–न–वइन्ना इन् शाअल्लाहु बिकुम ल–ला हिकू–न***

"मौमिन और मुसलमान घरवालों पर सलामती हो, अल्लाह तआला हम से पहले पहुंचने वालों और बाद में आने वालों पर रहमत फ़रमाये, और हम भी इन्–शाअल्लाह तुम से मिलने वाले हैं"

(मुस्लिम शरीफ़)

(3) अस्सलामु अलैकुम अह्–लद्दियारि मिनल् मुअ्मिनि–न वल् मुस्लिमी–न, व इन्ना इन्

शाअल्लाहु बिकुम् ल–लाहिकू–न, अन्तुम् लना फ–र–तुन, व नह्नु, लकुम् त–ब अुन, अस्–अलुल्ला–ह लना –व–लकुमुल् आफि–य–त

“(ऐ मोमिन और मुसलमान घर वालो) तुम सब पर सलामती हो, हम भी ज़रुर अगर अल्लाह ने चाहा तो तुम्हारे पास पहुंचने वाले हैं, तुम हम से पहले आ गये और हम तुम्हारे बाद हैं, मैं अल्लाह तआला से अपने लिये और तुम्हारे लिये आफ़ियत का चाहने वाला हूँ” (मुस्लिमशरीफ़)

१२० क़ब्रस्तान की ज़ियारत के मौक़ा पर कुरआन मजीद पढ़ने का सुन्नत से कोई सुबूत नहीं। बल्कि ऊपर के मस्अले में बयान की गई हदीसों में तो कुरआन के न पढ़ने की तरफ़ इशारा है, क्यों कि अगर कोई इस्लामी हुक्म होता तो रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम खुद भी पढ़ते और सहाबा को भी इस की तालीम देते, ख़ास तौर पर जब हज़रत आइशा रज़ि० ने क़ब्रस्तान की ज़ियारत के मौक़ा पर दुआ के बारे में पूछा था कि क्या पढ़ें? तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने सिर्फ़ सना और दुआ ही पढ़ने की तालीम दी थी। अगर क़िराअत *(कुरआन पढ़ना)* या सूरः फ़ातिहा वग़ैरह पढ़नी, जायज़ होती, तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम कभी न छुपाते, जब कि इल्मे–वसूल का यह क़ाइदा है कि किसी बात को वक़्त गुज़र जाने के बाद भी बयान करना जायज़ नहीं कुजा कि उसे छुपाया जाये। अगर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम सहाबा को कुछ सिखाते तो हम तक ज़रुर पहुंच जाता। अगर सहीह सनद से बात साबित नहीं है तो इस के माना यह हैं कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इस मस्अले के तअल्लुक़ से कुछ बताया ही नहीं।

रसूले करीम सल्ललल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के नीचे बयान किये गये हुक्म से भी मज़ीद साबित होता है कि कुरआन मजीद का *(इस मौके़ पर)* पढ़ना जायज़ नहीं। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

"अपने घरों को क़ब्रस्तान न बनाओ, जिस घर में सूर: बक़र: की तिलावत हो वहाँ से शैतान भाग जाता है"
(मुस्लिम, तिर्मिज़ी)

आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इस बात को साफ़ लफ़्ज़ों में फ़र्मा दिया कि क़ब्रस्तान कुरआन पढ़ने की जगह नहीं है, इस लिये आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने रग़बत दिलाई है कि घरों में कुरआन की तिलावत किया करो, और उन्हें क़ब्रस्तान की तरह न बनाओ जहाँ कुरआन नहीं पढ़ा जा सकता। इसी तरह एक दूसरी हदीस में इस बात का हुक्म है कि क़ब्रस्तान नमाज़ अदा करने की जगह नहीं है। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़रमाया :

"अपने घरों में नमाज़ अदा किया करो और उन्हें क़ब्रस्तान न बना लो" (मुस्लिम)

इस हदीस का बाब इमाम बुख़ारी रह० ने इस तरह बाँधा है "**क़बरस्तान में नमाज़ अदा करने की कराहात का बयान**" लिहाज़ा इस बात की तरफ़ इशारा है कि क़ब्रस्तान में नमाज़ अदा करना मकरूह है। इसी तरह हदीस से साबित होता है कि क़ब्रस्तान में कुरआन मजीद पढ़ना मकरुह हैं। क्यों कि दोनों में कोई फ़र्क़ नहीं। इसी लिये जम्हूर अहले इल्म का यह फ़त्वा है कि कुरआन पढ़ना मकरुह है, जैसे इमाम अबू हनीफ़ा, इमाम मालिक, इमाम अहमद रहि० का भी यही क़ौल है। इमाम दावूद ने अपनी किताब "मसाइल" में लिखा है कि,

"मैं ने इमाम अहमद से सुना, जब उन से क़ब्र के पास क़ुरआन पढ़ने के बारे में पूछा गया तो उन्हों ने उसे नाजायज़ कहा" (मसाइल)

१२१ उन के हक़ में दुआ के लिये हाथ उठाना जायज़ है। हज़रत आइशा रज़ि० बयान करती है:

"एक रात रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम घर से निकले तो मैं ने बरीरा (लौंडी) को आप के पीछे भेजा ताकि वह देखें कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम कहाँ गये हैं? बरीरा ने बताया कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम "बक़ीअ़" (क़ब्रस्तान) की तरफ़ गये हैं, फिर आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने बक़ीअ़ में खड़े हो कर हाथ उठाये फिर पलट आये" बरीरा ने वापस आ कर मुझे सारी बात बता दी, सुबह हुई तो मैं ने पूछा कि रात आप कहाँ तशरीफ़ ले गये थे? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया: "मुझे बक़ीअ़ वालों की तरफ़ भेजा गया था, ताकि उन के हक़ में दुआ करूँ" (मुस्नद अहमद, मुअत्ता इमाम मालिक)

१२२ दुआ करते वक़्त क़ब्रों की तरफ़ मुंह न करे बल्कि क़िब्ला की तरफ़ करे, इस लिये कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने क़ब्रों की तरफ़ रुख़ कर के नमाज़ पढ़ने से मना फ़र्माया है (इस तअल्लुक़ से मस्अला आगे आ रहा है) 'दुआ' नमाज़ का सत और निचोड़ है, इस लिये दुआ का भी नमाज़ वाला हुक्म है और नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का इर्शाद है

"दुआ ही तो इबादत है"

फिर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने सूर: मुअ़्मिन की आय: तिलावत फ़र्माई जिस का तर्जुमा यह है :

"तुम्हारे रब ने फ़र्माया कि मुझ से दुआ करो मैं तुम्हारी दुआ क़ुबूल करता हूँ" (सूर: मुअ़्मिन, आय: ६०)

१२३ जब काफ़िर की क़ब्र के पास जाये तो सलाम न करे और न

ही उस के लिये दुआ करे, बल्कि आग की ख़बर दे। हज़रत सअद बिन अबी वक़्क़ास रज़ि० की रिवायत के मुताबिक़ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का यही हुक्म है:

एक दीहाती (आराबी) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की सेवा में हाज़िर हो कर कहने लगा कि मेरा बाप सेला रहमी करता था, वह ऐसा था, अब वह कहाँ है? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़र्माया: "आग में" गोया उस दीहाती को यह बात बुरी लगी, तो पूछने लगा, या रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम! आप के वालिद कहाँ हैं ? आप ने फ़रमाया: "जब तुम किसी काफ़िर की क़ब्र के पास से जाओ तो उसे आग की ख़बर दो" बाद में देहाती मुसलमान हो गया तो कहने लगा, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने मुझे मुश्किल में डाल दिया है, मैं जब भी किसी काफ़िर की क़ब्र के पास से गुज़रता हूँ तो उसे आग की ख़बर देता हूँ।

(अमलिल् यौमि वल्लैलति, अल् अहादीसुल्-मुख़्तारह)

१२४ मुसलमानों की क़ब्रों के बीच में जूतों समेत न चलें, जैसा कि हज़रत बशीर बिन ख़सासिय्यह से रिवायत है। वह फ़रमाते हैं:

"मैं रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के साथ था, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम मुसलमानों की क़ब्रों के पास आये, कि आप की निगह ऐसे आदमी पर पड़ी जो जूतों समेत चल रहा था, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने उसे देख कर फ़रमाया: "ऐ जूते वाले! उन्हें उतार दे" उस ने देखा और जब मालूम हुआ कि आप तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम हैं तो जूते उतार कर फेंक दिये" (अबू दाऊद)

१२५ अगर-बत्ती या इस क़िस्म की दूसरी खुश्बू-दार घास या गुलाब के फूल वग़ैरह क़ब्र पर रखना जायज़ नहीं, इस लिये कि सहाबा, इमामों और बुज़ुर्गों से ऐसा साबित नहीं है,अगर इस में कोई नेकी होती, तो वह ज़रुर हम से पहले करते, जैसा कि हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० का क़ौल है :

> *"हर बिद्अत गुमराही है, चाहे लोग उसे कितना ही अच्छा समझें"*

क़ब्रस्तान में जो काम हराम हैं

१२६ क़ब्रों के पास नीचे के काम हराम हैं :

(१) अल्लाह के नाम पर (क़ब्रों के पास) ज़िब्ह करना: रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़र्माया :

"इस्लाम में क़ब्रों के पास ज़िब्ह करना नहीं है"

(अबू दावूद)

हज़रत अब्दुर्रज़्ज़ाक़ बिन हुमाम कहते हैं :

"लोग क़ब्र के पास गाये, बकरी वग़ैरह ज़िब्ह किया करते थे (इस काम से रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने मना किया था) (अबू दावूद)

(२) बाहर की मिट्टी ला कर क़ब्र को ऊँचा करना।

(३) गच वग़ैरह से क़ब्र को लेप करना।

(४) क़ब्र पर कुछ लिखना।

(५) उस पर तामीर करना।

(६) उस के ऊपर बैठना।

ऊपर जो मसाइल बयान किये गये हैं उन के सुबूत के लिये नम्बर वार हदीसें हैं।

(१) हज़रम ज़ाबिर रज़ि० रिवायत करते हैं :

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने इस बात से मना किया है कि क़ब्र को चूना किया जाये, उस पर बैठा जाये, या उस पर घर बनाया जाय (या उस पर बाहर की मिट्टी डाली जाये, उस पर बैठा जाये, उस पर लिखा जाये)" (मुस्लिम, अबू दावूद)

(२) *"रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने क़ब्र पर इमारत तामीर करने से मना फ़रमाया है"*

(मुस्लिम, अबू दावूद)

(३) हज़रत अबुल हैयाज असदी बयान करते हैं कि मुझ से हज़रत अ़ली रज़ि० ने फ़रमाया कि क्या में तुम्हें उस ज़िम्मे-दारी पर न भेजूँ, जिस पर रसूलुल्लाह सल्लल्लहु अ़लैहि वसल्लम ने मुझे रवाना किया था? (वह ज़िम्मेदारी यह है कि)

"कोई मूरत तोड़े बग़ैर न छोड़ना (एक रिवायत में तस्वीर के लफ़्ज़ हैं) और हर ऊँची क़ब्र को बराबर कर देना" (मुस्लिम)

(४) हज़रत सुमामा बिन शुफ़ी बयान करते हैं कि:

मुल्क रुम की जानिब हम हज़रत फुज़ाला बिन उबैद रज़ि० के साथ निकले, वह हज़रत मुआ़विया की तरफ़ से "दर्ब" के गवर्नर थे (एक दूसरी रिवायत में है कि हम रुम की जन्ग में थे, इस लश्कर के कमान्डर फुज़ाला बिन उबैद अन्सारी थे) हमारे चचा ज़ाद भाई "रुदस" मुक़ाम पर फ़ौत हो गय तो हज़रत फुज़ाला ने उन की नमाज़े-जनाज़ा पढ़ाई, और दफ़्न करने तक क़ब्र के पास खड़े रहे, जब क़ब्र बराबर हो गई तो फ़र्माया: "हल्की रखो" (दूसरी रिवायत के मुताबिक़ बस थोड़ी ही मिट्टी डालो) "क्यों कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम हमें क़ब्रों को ज़मीन के बराबर रखने का हुक्म दिया करते थे" (मुस्लिम,अबू दावूद)

हदीस के ज़ाहिर से यह मालूम होता है कि क़ब्रों को ज़मीन के बराबर रखा जाये और कुछ भी बुलन्द न किया जाये, जब कि यह माना हर्गिज़ नहीं मुराद है। इस की दलील यह है कि सुन्नत तो यह है कि क़ब्रों को एक बालिश्त जितना ज़मीन से ऊँचा रखा जाये, इस बात की ताईद हज़रत फुज़ाला के क़ौल में मौजूद है, उन्हों ने फ़र्माया: "मिट्टी कम रखो" यह नहीं फ़र्माया: "मिट्टी बिल्कुल ख़त्म कर दो"। उलमा-ए-मुफ़स्सिरीन ने यह तफ़्सीर बयान की हैं।

(मिर्क़ात, भाग २/३७२)

(५) हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का यह फ़र्मान नक़ल करते हैं :

> *"क़ब्र पर बैठने से तो यह बेहतर है कि आदमी अन्गारे पर बैठ जाये, जिस से उस का कपड़ा भी जले और फिर यह आँच उस के चमड़े तक पहुंच जाये (दूसरी रिवायत में है कि "क़ब्र पर पाँव रखने से यह बेहतर है कि आदमी..................पूरी हदीस)*

(६) हज़रत उक़्बा बिन आ़मिर रज़ि० बयान करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़र्माया:

> *"किसी मुसलमान की क़ब्र पर चलने के मुक़ाबले में मुझे यह बात पसन्द है कि मैं अन्गारों पर,या तल्वारों पर चलूँ, या अपना जूता अपनी टाँग से सी लूँ, इसी तरह बाज़ार में या क़ब्रों के दर्मियान पाख़ाना-पेशाब करना (बुराई में) बराबर है"*

(मुसन्निफ़ इब्ने शैबा, इब्ने माजा)

(७) हज़रत अबू मरसद ग़नवी रज़ि० बयान करते हैं कि मैं ने रसूलल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम से सुना :

> *"क़ब्रों की तरफ़ मुँह कर के नमाज़ न पढ़ो और न ही उस पर बैठो"*

(८) क़ब्रों की तरफ़ रुख करके नमाज़ पढ़ना (हराम है) जैसा कि ऊपर की हदीस से साबित है।

(६) क़ब्र के पास नमाज़ अदा करनी, चाहे मुँह उस तरफ़ न किया जाये। इस तअल्लु से कई हदीसें हैं:

(१) हज़रत अबू सईद रज़ि० बयान करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़र्माया :

> *"सारी ज़मीन मस्जिद (इबादत की जगह) सिवाये क़ब्रस्तान और हम्माम के" (अबू दाऊद, तिर्मिज़ी)*

(२) हज़रत अनस रज़ि० रिवायत करते हैं :

> *"नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने क़ब्रों के दर्मियान नमाज़ अदा करने से रोका है" (मजमउज़्ज़वायद)*

(३) हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० बयान करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़र्माया :

> *"नमाज़ का कुछ हिस्सा घरों में अदा करो, उन्हें क़ब्रस्तान न बनाओ" (बुख़ारी, मुस्लिम)*

(४) हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० बयान करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़र्माया:

> *"अपने घरों को क़ब्रस्तान न बनाओ, शैतान उस घर से भागता है जिस घर में सूर: बक़र: पढ़ी जा रही हो" (मुस्लिम)*

(५) क़ब्रों पर मस्जिदें बनाना *(या इबादत घर बनाना)* इस मस्अले के लिये छह हदीसें हैं :

(१) हज़रत आइशा और हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि० बयान करते हैं कि जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की तक्लीफ़ बढ़ जाती थी, तो अपना पल्लो मुँह पर डाल लेते और जब ज़रा सुकून होता तो मुँह से कपड़ा हटा देते, इस दौरान आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फर्माया :

"अल्लाह तआला यहूद व नसारा पर लानत करे, उन्हों ने अपने नबिय्यों की क़ब्रों को मस्जिद (इबादत घर) बना लिया है। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम उन के इन हरकतों से ख़बरदार व होशियार कर रहे थे" (बुख़ारी, मुस्लिम)

(२) हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि० बयान फ़र्माती हैं:

"अगर यह हुक्म न होता तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की क़ब्र खुली जगह में बनाई जाती, लेकिन इस बात का डर था कि वह सज्दा गाह न बन जाये" (बुख़री, मुस्लिम)

(३) अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

"ऐ अल्लाह! मेरी क़ब्र को बुत न बना देना। अल्लाह तआला ऐसे लोगों पर लानत करे जो नबिय्यों की क़ब्रों को सज्दा गाह बना लेते हैं" (मुस्नद अहमद)

(४) हज़रत जुन्दुब रज़ि० बयान करते हैं कि मैं ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की वफ़ात से सिर्फ़ पाँच दिन पहले यह बात आप से सुनी, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़र्माया:

"तुम मेरे भाई और दोस्त हो, मैं इस बात से बेज़ार हूँ कि तुम में से किसी को अपना दोस्त बनाऊँ, क्यों कि अल्लाह तआ़ला ने मुझे अपना दोस्त बना लिया है, जैसा कि उस ने हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम को अपना दोस्त बनाया था, मुझे अपनी उम्मत में से दोस्त बनाना ही होता तो मैं अबू बक्र को दोस्त बनाता। यह बात खूब ग़ौर से सुन लो! तुम से पहली क़ौमें अपने पैग़म्बरों और नेक लोगों की क़ब्रों को मस्जिदें बना लेती थीं" ख़बरदार! तुम क़ब्रों को मस्जिदें मत बनाना. मैं तुम्हें इस बात से मना कर रहा हूँ" (मुस्लिम शरीफ)

(५) हज़रत अब्दुल्लाह बिन मस्ऊद रज़ि० बयान करते हैं कि मैं ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को यह फ़रमाते सुना:

"बेशक बद तरीन लोग वह हैं जिन की ज़िन्दगी में क़यामत आये गी और वह लोग जो क़ब्रों को मस्जिदें बना लें" (मुस्नद इमाम अहमद)

(६) हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि० बयान करती हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की बीमारी के दौरान चन्द बीवियों ने हब्शा में मारिया नाम की कनीज़ का आपस में ज़िक्र किया; (हज़रत उम्मे सल्मा और उम्मे हबीबा यह दोनों हब्शा जा चुकी थीं) उन्हों ने उस की खूब सूरती और तस्वीरों का ज़िक्र किया, इस मौक़ा पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़र्माया:

"उन लोगों में जब कोई नेक आदमी मर जाता तो उस की क़ब्र पर मस्जिद बना देते, फिर उसी तरह की तस्वीरें बना देते। क़यामत के दिन यह लोग अल्लाह तआला की बद-तरीन मख़्लूक़ हों गे" (बुख़ारी)

ऊपर की इस हदीस में क़ब्रों को मस्जिद बना लेने के तअल्लुक़ से कई बातें मालूम हुयीं :

(क) उन की तरफ मुंह करके नमाज़ अदा करना।

(ख) क़ब्रों को सज्दा करना।

(ग) उन पर मस्जिदें बनाना। (यह सब नाजायज़ है)

(१०) क़ब्रों को मेला बनाना, ख़ास मौक़े पर सफ़र करके वहाँ हाज़िरी देना, ताकि उन क़ब्रों की इबादत की जाये, या किसी की इबादत की जाये। हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० बयान करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इर्शाद फ़र्माया :

"मेरी क़ब्र को मेला न बना लेना और अपने घरों को क़ब्रें न बना लेना। तुम जहाँ भी हो मुझ पर दरुद भेजा करो, तुम्हारे दरुद मुझे पहुँच जाते हैं" (अबू दावूद)

(११) सफ़र करके क़ब्रों की ज़ियारत के लिये जाना :

(क) हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० बयान करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया :

"तीन मस्जिदों के अलावा किसी के लिये भी सवाब की निय्यत से सफ़र न किया जाये। (१) मस्जिदे-हराम (२) मस्जिदे-रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अ़लैही वसल्लम) (३) मस्जिदे अक़्सा" (बुख़ारी, मुस्लिम)

(ख) हज़रत अबू सईद खुदरी रज़ि० कहते हैं कि मैं ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम को फ़रमाते सुना है :

"तीन मस्जिदों के अ़लावा किसी के लिये भी सवाब की निय्यत से सफ़र न करो (१) मेरी यह मस्जिद (२) मस्जिदे-हराम (३) मस्जिदे अक़्सा" (बुख़ारी, मुस्लिम)

(ग) हज़रत अबू बसरा ग़िफ़ारी रज़ि० बयान करते हैं कि मैं हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० से मिला जब की वह कहीं से आ रहे थे; मैं ने पूछा कि आप कहाँ से आ रहे हैं? कहने लगे, तूर पहाड़ से वापस आ रहा हूँ, वहाँ नमाज़ अदा की थी। अबू बसरा कहने लगे कि अगर आप से पहले मुलाक़ात हो जाती तो आप न जाते, क्यों कि मैं ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम को यह फ़रताते सुना है :

"तीन मस्जिदों को छोड़ कर कहीं भी (सवाब की निय्यत से) सफ़र करके न जाओ, (१) मस्जिदे-हराम (२) मस्जिदे-नबवी (३) मस्जिदे-अक़्सा

(घ) हज़रत क़ज़्आ बयान करते हैं कि मैं ने तूर पहाड़ पर जाने का इरादा किया तो हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० से पूछा, तो उन्हों ने फ़रमाया : क्या तुम्हें मालूम नहीं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का फ़र्मान है :

"तीन मस्जिदों के अ़लावा कहीं सफ़र करके न जाया

जाये, (१) मस्जिदे-हराम (२) मस्जिदे-नबवी (३) मस्जिदे-अक़्सा" (अख़्बारे मक्का)

इस लिये कोहे-तूर (तूर पहाड़) को छोड़ो, वहाँ मत जाना।

(१२) क़ब्रों के पास चराग़ जलाना: इस के लिये कई दलीलें हैं
(१) यह नई बिद्अ़त है। रसूलुल्लाह सल्लल्लसहु अ़लैहि वसल्लम का फ़र्मान है

"हर बिद्अ़त गुमराही है और गुमराही आग में ले जाने वाली हैं"

(२) इस में माल की बर्बादी है जिस से शरीअ़त ने मना किया है, (दिखें मस्अला न० ४२) *(नसई)*

(३) आग की पूजा करने वाले मजूसियों से मिलता-जुलता यह काम है: इमाम इब्ने हजर फ़क़ीह रह० ने "अल्-ज़वाजिर" में लिखा है:

"हमारे उलमा ने क़बर पर चराग़ जलाने को हराम क़रार दिया है अगर्चे कुछ वक़्त के लिये ही हो, इस लिये कि न तो वहाँ रहने वाले मुर्दे को फ़ाइदा है और न वहाँ जाने वाले को। उन्होंने उसको माल बर्बाद करने और फ़ुज़ूल ख़र्ची में शामिल किया है, और आग की पूजा करने वालों के मुशाबह बताया है, बहुत मुमकिन है कि यह कबीरा गुनाह हो" (अल्-ज़वाजिर, भाग १/ ३४)

(१३) मुर्दे की हड्डी तोड़ना, इस की दलील रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का फ़र्मान है

"मोमिन मुर्दे की हड्डी ताड़ना ऐसा ही है जैसे ज़िन्दा की हड्डी तोड़ना" (अबू दावूद, इब्ने माजा)

मोमिन मुर्दे की हड्डी तोड़ना हराम होने की दलील यह हदीस है, इसी लिये इमाम हम्बल रह० के मज़हब में यह है कि "मय्यित के किसी हिस्से को काटना हराम है इसी तरह उन की ज़ात को बर्बाद करना या जलाना भी हराम है, चाहे उसने इस बात की वसिय्यत ही क्यों

न की हो" *(कश्फुल् कनाअ्)*

और दूसरे मसलक में भी इसी तरह है, बल्कि इब्ने जहर फ़क़ीह इसे कबीरा गुनाह में शुमार करते हुये फ़र्माते है।

"हदीस से मुझे मालूम हुआ कि इस का जुर्म ज़िन्दा की हड्डी तोड़ने की तरह है" (अल्-ज़वाजिर १/१३४)

इमाम नववी रह० के ख़्याल का निचोड़ यह है कि

"उलमा का इस बात पर इत्तिफ़ाक़ है कि बिला किसी वजह के क़ब्र को उखाड़ना मना है, अल्बत्ता ज़रुरत के तहत जायज़ है" (जैसा कि मस्अला न० १०७ में बयान हुआ)

बाज़ इस्लामी हुकूमतें शहर को खूबसूरत बनाने के बहाने मुसलमानों के क़ब्रस्तान को ख़त्म कर देती हैं, यह काम बिल्कुल ही हराम है, उन्हें मुर्दों के एहतराम का कुछ भी ख्याल नहीं होता, क़ब्रों को रौंदने या उन की हड्डियाँ तोड़ने की जो मिनाही है इस का कुछ भी ख़्याल नहीं करते, किसी को यह गुमान तक नहीं होता कि आबादी को खूबसूरत और ढंग से बनाने के बहाने ऐसा काम करना जायज़ भी है? ऐसा हर्गिज़ नहीं, यह काम ज़रुरत में नहीं आता, बल्कि यह तो खूबसूरती और सजावट में शामिल है, जिस की वजह से मुर्दों पर ज़्यादती करना जायज़ नहीं। ज़िन्दा लोगों की ज़िम्मेदारी तो यह है किअपनेकामको इस ढन्ग से करें कि मुर्दों को तक्लीफ़ भी न पहुँचे।

एक और भी तअ़ज्जुब वाली बात यह है कि जो हुकुमतें पत्थरों और उन घरों का जो किसी न किसी मुर्दे के लिये बनाई गई हैं, मुर्दों के मुक़ाबला में ज़्यादा एहतराम करती हैं, अगर कोई मज़ार, या कनीसा पलानिन्ग के अन्दर आ जाये तो उसे अपने हाल पर छोड़ दिया जाता है और उस को बचाने के लिये पूरे नक़्शे को बदल दिया जाता है, ताकि उन को बाक़ी रखा जा सके, क्यों कि वह उन्हें "आसारे-क़दीमा" में शुमार करते हैं और आम क़ब्रस्तानों को इतना भी नहीं दिया जाता

ताकि उन की ख़ातिर नक़्शे में तबदीली की जा सके। हमारी मालूमात में कुछ हुकूमतें तो इस बात की कोशिश करती हैं कि नये क़ब्रस्तान शहर से बाहर ही हों और पुराने क़ब्रसतान में भी कोई मुर्दा दफ़्न न किया जाये, शरीअ़त के मुताबिक़ यह दूसरी ग़लती है, इस लिये कि बहुत सारे मुसलमान (दूर होने की वजह से) क़ब्रों की ज़्यारत से रह जाते हैं, क्यों कि बहुत से लोग दूर होने की वजह ये वहाँ नहीं पहुँच सकते।

इस सारी शरीअत की मुख़ालिफ़त का अस्ल सबब यूरप की तक़लीद है जिस का ख़्याल काफ़िराना और माद्दा परस्त है। यूरप तो ईमान की निशानियों को ख़त्म कर देना चाहती है और हर उस चीज़ और निशानी को भी जिस से आख़िरत याद आये। अगर उन का ख़्याल दुरुस्त होता तो वह नुक़्सान पहुँचाने वाली चीज़ों को ख़त्म करने की कोशिश करती, जैसे शराब की तिजारत या इस का पीना वग़ैरह या और दूसरी तमाम बुराइयाँ जो दूसरे नामों से जानी पहचानी जाती हैं इन बुराइयों को दूर करने की तरफ़ तवज्जुह न देना और आख़िरत को याद दिलाने वाली निशानियों को मिटाने की कोशिश करना और उन्हें अपनी आँखों से दूर रखना, इस बात का सबूत है कि उन की निय्यत उन के ज़ाहिरी बयानात के उलट है, और यह बहुत गम्भीर मुआमला है।

(२) ग़ैर मुस्लिमों की हड्डियों का कोई एहतराम नहीं, क्यों कि हड्डी के एहतराम का ताल्लुक़ सिर्फ़ मोमिन के साथ है, क्यों कि हदीस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का इर्शाद "मोमिन की हड्डी" का ल्फ़्ज़ है, इस से ज़ाहिर है कि काफ़िर की हड्डी का कोई एहतराम नहीं है।

हाफ़िज़ इब्ने हजर रह० इसी बात की तरफ़ इशारा करते हुये लिखते हैं :

"इस से मालूम हुआ कि मोमिन का एहतराम मरने

के बाद भी इसी तरह है जिस तरह उस की ज़िन्दगी में था" (फ़त्हुल-बारी)

अस्पताल के तालिब इल्म अक्सर यह सवाल करते हैं कि क्या डाक्ट्री रिसर्च के लिये हड्डी तोड़ना जायज़ है? इस का जवाब यही है कि मोमिन की हड्डी तोड़ना जायज़ नहीं, अल्बत्ता मोमिन के अलावा दूसरों की हड्डी तोड़ना जायज़ है। इस बात की ताईद नीचे के मस्अला से भी होती है

१२७ काफ़िरों की क़ब्रें उखड़ना जायज़ है, इस लिये कि उन का कोई एहतराम नहीं, जैसा कि ऊपर बयान की गई हदीस से ज़ाहिर है। हज़रत अनस रज़ि० की इस हदीस से भी साबित है:

कि जब नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम मदीना शरीफ़ आये तो बनू अ़मर बिन औफ़ के हाँ आ कर उतरे। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम उन के हाँ चौदाह रातें रहे, फिर आप ने बनी नज्जार के हाँ पैग़ाम भेजा तो वह तल्वारें लटकाए हुये हाज़िर हुये, गोया कि वह नक़्शा मेरी आँखों के सामने है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम अपनी सवारी पर हैं और अबू बक्र सिद्दीक़ आप के पीछे हैं। बनी नज्जार के ज़िम्मेदार लोग आप के दायें-बायें खड़े हैं, इसी हालत में आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम हज़रत अबू अय्यूब अन्सारी के घर तक पहुँचे, जहाँ नमाज़ का वक़्त होता वहीं नमाज़ अदा करना आप पसन्द फ़र्माते, उस वक़्त आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम बकरियों के बाड़े में नमाज़ अदा करते थे, आप ने मस्जिद बनाने का हुक्म दिया, आप ने बनी नज्जार के ज़िम्मे-दार लोगों की तरफ़ पैग़ाम भेज कर फ़रमाया: "ऐ बनी नज्जार! मुझ से इस बाग़ की क़ीमत ले लो"

उन्हों ने कहा नहीं, हम तो सिर्फ़ अल्लाह तआला से इस का अज्र चाहते हैं, उस में मुश्रिकों की क़ब्रें थीं खजूर के पेड़ भी थे और ज़मीन ऊबड़-खाबड़ थी। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने मुश्रिकों की क़ब्रों को उखाड़ने का हुक्म दिया, जगह बराबर कर दी गई और खजूर के पेड़ काट दिये गये, फिर उन्हें क़िब्ला की तरफ़ लाइन में खड़ा कर दिया गया, उन्हें मज़बूत करने के लिये बग़ल में पत्थर लगा दिये गये, सहाबा पत्थर ला रहे थे और रज्ज़िया अश्आ़र पढ़ रहे थे। नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम भी उन के साथ थे और आप भी कह रहे थे, शेर का तर्जुमा यह है : "यह बोझ उठाना (आख़िरत के लिये है) यह ख़ैबर (की खजूरों) का बोझ उठाना नहीं है। ऐ हमारे रब! यह बड़ी नेकी का काम है और बहुत अच्छा काम है। मुहाजिरीन को बख़्श दे" (बुख़ारी मुस्लिम)

हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि० की एक दूसरी रिवायत में यूँ है :

"ऐ अल्लाह! बेशक अज्र बस आख़िरत ही का अज्र है, पस, अन्सार और मुहाजिरीन पर रहमत नाज़िल फ़रमा"

हाफ़िज़ इब्ने हजर रह० ने "फ़त्हुल बारी" में लिखा है :

"इस हदीस से साबित होता है कि जो क़ब्रस्तान हदिया या ख़रीद कर अपने क़ब्ज़े में आ जाये, उस में हर तरह की तब्दीली की जा सकती है। गिरी हुई क़ब्रों को ख़त्म करना, अगर वह एहतराम के क़ाबिल न हों (मुसलमानों की न हों) ऐसी क़ब्रों को उखाड़ना और जो कुछ वहाँ है उसे निकालने के बाद मुश्रिकों के क़ब्रस्तान की जगह नमाज़ अदा करना भी जायज़ है, और ऐसी जगहों पर मस्जिद भी बनाई जा सकती है" (फ़त्हुल बारी)

जनाज़ा के अहकाम एक नज़र में

अल्लामा मुहम्मद नासिररुद्दीन अल्-बानी (हफ़िज़हुल्लाह तआ़ला) ने अपनी इस किताब में जनाज़े के मुख़्तलिफ़ अहकाम व मसाइल के तअ़ल्लुक़ से १२७ मसाइल बयान किये हैं। हर-एक मस्अला के नीचे कुरआन और हदीस की मुस्तनद किताबों के हवाले से हदीसें बयान फ़र्माई हैं। मैं(अनुवादक) ने निम्न में लोगों के लिये सिर्फ़ १२७ अह्काम को नीचे लिख दिया है, जिन लोगों को हवाला और दलील व सुबूत चाहिये वह उस मस्अला न० में तफ़्सील के साथ देखें

(अनुवादक)

फराइज़े मरीज़

(१) मरीज़ के लिये ज़रुरी है कि वह अल्लाह के फ़ैसिले पर राज़ी रहे, तक़्दीर पर सब्र करे और अपने रब के बारे में अच्छा गुमान रखे, यह बात उस के हक़ में बहुत ही मुफ़ीद है।

(२) उस के लिये मुनासिब है कि वह हर वक़्त डर और उम्मीद के बीच की हालत में रहे, अपने गुनाहों पर अल्लाह तआ़ला की सज़ा से डरता हो और अपने रब की रहमत का उम्मीद-वार भी हो।

(३) मरीज़ को मौत की तमन्ना हर्गिज़ नहीं करनी चाहिये, चाहे बीमारी कितनी ही सख़्त क्यों न हो।

(४) अगर उस के जिम्मे लोगों के हुक़ूक़ हों तो जहाँ तक हो सके अदा करे, वर्ना वसिय्यत कर जाये।

(५) वसिय्यत उसे जल्दी करनी चाहिये।

(६) यह भी ज़रुरी है कि ग़ैर वारिस रिश्ते-दारों के लिये भी वसिय्यत करे।

(७) उसे अपने माल में से एक तिहाई *(१/३)* की वसिय्यत का हक़ है, इस से ज्यादा जायज़ नहीं, अल्बत्ता उस से कम की वसिय्यत अफ़ज़ल है।

(८) उस वसिय्यत पर दो सच्चे मुसलमानों की गवाही हो। और दो मुसलमान न मिलें तो दो ग़ैर-मुस्लिम ही सही, लेकिन इस शर्त पर की उन की गवाही शक के मौक़ा पर एतबार के क़ाबिल हो।

(९) माँ-बाप और क़रीबी रिश्ते दार (जो मीरास के शरीअत के मुताबिक हक़दार हैं) के लिये वसिय्यत करनी जायज़ नहीं, इस लिये कि मीरास वाली आयः से इन का हुक्म मुस्तस्ना हो चुका है।

(१०) वसिय्यत करने में किसी पर ज़्यादती हराम है, यानी किसी को उस के हक़ से महरुम कर दे और किसी को उस के हक़ से ज़्यादा दे दे।

(११) ज़ालिमाना वसिय्यत बातिल और ना क़ाबिले कुबूल है।

(१२) इस ज़माने में आम लोग बिद्अतों का शिकार हैं, ख़ास कर जनाज़ा के बारे में, इस लिये एक मुसलमान बीमार के लिये यह भी ज़रुरी है कि वह यह भी वसिय्यत करे किउस का कफ़न दफ़्न सुन्नत के मुताबिक़ हो।

मरने वाले को नसीहत करना

(१३) जब कोई मरने लगे तो उसे तौहीद के कलिमे की तल्क़ीन करानी चाहिये

(१) मरीज़ के हक़ में दुआ करें (२) और उस के पास सिर्फ़ अच्छी बातें करें।

(१४) तल्क़ीन से मुराद पढ़ कर सिर्फ़ उसे सुनाना ही नहीं, बल्कि उस से कहा जाये कि वह भी पढ़े।

(१५) उस के पास सूरः यासीन पढ़ने और उस का मुँह क़िब्ला की तरफ़ करने के बारे में सहीह हदीस नहीं है, इस लिये ऐसा कुछ न करना चाहिये।

(१६) किसी काफ़िर की मौत के वक़्त मुसलमान के लिये उस के पास जाने में कोई हरज नहीं ताकि उसे इस्लाम की दावत दें, शायद वह मुसलमान हो जाये।

वफ़ात के बाद मौजूद लोगों की ज़िम्मेदारियाँ

(१७) जब मरीज़ की वफ़ात हो जाये तो मौजूद लोगों पर ज़िम्मेदारी आती है कि

(१) उस की आँखें बन्द कर दें (२) उस के लिये दुआ करें (३) उस के बदन को कपड़े से ढाँक दें (४) हज का एहराम बांधे हुये हाजी का सर और मुँह न ढाँका जाये (५) जब मौत हो जाये तो उसके कफ़न दफ़्न में जल्दी की जाये (६) जहाँ मरा है, वहीं दफ़्न किया जाये, किसी दूसरी जगह न ले जाया जाये (७) मरने वाले का क़र्ज़ उस के माल से फ़ौरन अदा कर दिया जाये।

मौजूद लोगों के लिये जायज़ काम

(१८) मुर्दा के मुँह से कपड़ा हटा कर आँखों के दर्मियान बोसा दिया जा सकता है।

क़रीबी रिश्ते दारों के फ़राइज़

(१६) मय्यित के क़रीबी रिश्ते दारों को जब मरने की ख़बर मिले तो दो बातों पर अमल करें

(१) तक़दीर पर सब्र करें (२) "इन्ना लिल्लहि व इन्ना इलैहि राजिऊन" पढ़ें।

(२०) औरत अफ़्सोस के तौर पर हर क़िस्म के बनाव सिघांर चाहे तो न करे। अपने बच्चे या रिश्ते-दार के लिये तीन रोज़ तक सोग मना सकती है।

(२१) लेकिन अगर शौहर की रज़ा मन्दी और ख़ाहिश को सामने रखते हुये (शौहर के अ़लावा) किसी दूसरे का सोग न मनाये तो यह बेहतर है।

रिश्तेदारों के लिये कुछ कामों के करने की मिनाही

(२२) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने कई काम हराम फर्माया है, उन से बचना चाहिये
(१) नौहा करना (रोना चिल्लाना) (२) मुँह पीटना, (३) गरीबान फाड़ना (४) बाल मुंडवाना (५) बालों को ग़लत तरीक़े से खुला छोड़ देना (६) ग़म को ज़ाहिर करने के लिये चन्द दिन तक दाढ़ी न मूंडना और वह दिन बीत जाने के बाद दो बारा मूंड लेना (७) शुहरत और नाम वरी के लिये मौत की ख़बर ख़ास-ख़ास जगहों पर पहुँचाना

वफ़ात के एलान का जायज़ तरीक़ा

(२३) मरने की ख़बर का एलान करना जायज़ है, मगर शर्त यह है कि जाहिलाना रस्म व रिवाज के मुताबिक़ न हो। और अगर कफ़न दफ़्न और जनाज़ा के लिये कोई न हो तो वाजिब और ज़रुरी है।
(२४) मौत की ख़बर देने वाला लोगों से यह दर्ख़ास्त करे कि मरने वाले के हक़ में दुआ करें

अच्छी मौत की निशानियाँ

(२५) (१) जान निकलने के वक़्त कलिमए तौहीद पढ़ना (२) मौत के वक़्त माथे पर पसीना आना (३) जुमा की रात या जुमा के दिन मौत होना। (४) लड़ाई के मैदान में शहीद होना (५) अल्लाह की राह में मुजाहिद की मौत (६) ताऊन की वजह से मौत आना
(७) पेट की बीमारी से मरना (८) डूबकर मरना (९) मल्बे (बोझ) में दब कर मरना (१०) बच्चा पैदा होने के बाद औरत का निफ़ास की हालत में मरना (११) जल कर मरना (१२) पहलू के दर्द से मौत आना (१३) सिल (तपे-दिक़) की बीमारी में मरना (१४) अपने माल की हिफ़ाज़त करते हुये जान दे देना (१५) दीन की हिफ़ाज़त में जान जाना (१६) अपनी इज़्ज़त को बचाते हुये जान दे देना (१७) अल्लाह की राह में जिहाद के इन्तज़ार में मौत आना (१८) बराबर नेकी का

काम करते हुये मौत आना (१९) जिस आदमी को ज़ालिम हाकिम ने इस वहज से क़त्ल कर दिया कि उस ने नसीहत की थी।

मुर्दा के बारे में ख़याल ज़ाहिर करना

(२६) दो सच्चे प्रहेज़-गार मुसलमान का किसी मुर्दा के बारे में अच्छी राय उस के जन्नती होने की पहचान है

सूरज, चाँद गर्हन के वक़्त मौत

(२७) अगर किसी की मौत सूरज या चाँद गर्हन के वक़्त आ जाये तो यह मरने वाले की बड़ाई व बुज़ुर्गी की पहचान नही, यह अक़ीदा जाहिलाना है।

मय्यित का गुस्ल

(२८) जब कोई मर जाये तो उस को गुस्ल देने का इन्तज़ाम करना चाहिये

(२९) गुस्ल के दर्मियान इन बातों को धियान में रखना चाहिये : (१) गुस्ल तीन, या इस से ज़्यादा बार देना चाहिये (२) ताक़ बार देना चाहिये (३) दर्मियान में एक बार बैर की पत्ती या साबुन का इस्तेमाल करना चाहिये। (४) आख़िरी बार में पानी में खुशबू मिला देना चाहिये काफ़ूर हो तो बेहतर है (५) मेंढ़ियां खोल कर अच्छी तरह धोयें (६) बालों में कन्घी करें (७) और बाल के तीन चोटी बना कर पीछे डाल दें (८) गुस्ल दायें तरफ़ और वुज़ू की जगहों से शुरु करें (९) मरदों को मर्द और औरतों को औरत गुस्ल दें। (१०) मय्यित के ऊपर कपड़ा डाल कर उस के कपड़े उतारे जायें और फिर उस के नीचे से किसी छोटे कपड़े की मदद से गुस्ल दिया जाये (११) मय्यित के सतर को न देखा जाये और न ही छुवा जाये (१२) एहराम की हालत में मरने वाले के लिये खुश्बू का इस्तेमाल न करें (१३) शौहर-बीवी एक दूसरे को गुस्ल दे सकते हैं (१४) जो गुस्ल देना जानता हो गुस्ल दे

(३०) जो आदमी गुस्ल दे उसके लिये बड़ा सवाब है, लेकिन दो शर्तें हैं :

(१) गुस्ल देते वक़्त कोई ऐब नज़र आये तो उसे ज़ाहिर न करे

(२) सिर्फ़ सवाब के लिये गुस्ल दे, मज़दूरी न ले।

(३१) मुर्दा को नहलाने के बाद गुस्ल कर लेना बेहतर है (वाजिब नहीं)

(३२) लड़ाई में शहीद होने वाले को गुस्ल नहीं दिया जाये गा।

कफ़न के मसाइल

(३३) मय्यित को नहलाने के बाद कफ़न देना ज़रुरी है।

(३४) कफ़न का कपड़ा या उस की क़ीमत मरने वाले के माल से दी जाये गी, चाहे उस के अलावा कुछ भी न छोड़ा हो।

(३५) कफ़न इतना कुशादा होना चाहिये जो तमाम जिस्म को छुपा ले।

(३६) अगर कफ़न छोटा हो और दूसरा न हो तो मय्यित का सर और बाक़ी जिस्म ढांक दिया जाये और जितना बच जाये उस पर घास डाल दी जाये।

(३७) अगर कपड़ा कम हो और मुर्दे ज़्यादा हूँ तो कई मुर्दों को एक ही कपड़े में कफ़न दिया जा सकता है, इस तरह कि कपड़ा काट कर उन पर बांट दिया जाये और जिसे ज़्यादा कुरआन याद हो उसे क़िब्ला की तरफ़ पहले रखा जाये गा।

(३८) जिन कपड़ों में शहीद हुआ उन कपड़ों को उतारना नहीं चाहिये, बल्कि उसी तरह दफ़्न कर देना चाहिये।

(३९) शहीद को उस के कपड़ों के ऊपर से एक या एक से ज़्यादा कपड़ों में कफ़न देना चाहिये।

(४०) एहराम बांधे हुये आदमी को उन्ही दो कपड़ों में दफ़्न कर दिया जाये गा, जिस में उस की मौत हुई है।

(४१) कफ़न के सिलसिले में इन बातों का ख़्याल करना चाहिये :

(१) कफ़न सफ़ेद होना चाहिये (२) कफ़न में तीन कपड़े होने चाहिये (३) अगर हो सके तो एक हल्की धारी दार चादर भी शामिल हो।

(४२) मंहगा कपड़ा इस्तेमाल करना जायज़ नहीं और न ही तीन कपड़ों से ज्यादा दो।

(४३) औरत का कफ़न मर्द ही की तरह होगा, औरत, मर्द के कफ़न में कमी-बेशी की कोई दलील नहीं।

जनाज़ा ले जाना

(४४) जनाज़ा ले जाना और उसके साथ जाना वाजिब है, और यह एक मुसलमान का अपने मुसलमान भाई पर हक़ है।

(४५) जनाज़ा के साथ जाने की दो सूरतें हैं

(१) घर से लेकर नमाज़ तक साथ जाना (२) घर से लेकर दफ़्न से फ़रागत तक मौजूद रहना। दोनों सुरतों पर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने अमल फ़रमाया है।

(४६) ऊपर की दोनों सूरतों में दूसरी सूरत पहली से बेहतर और अफ़्ज़ल है।

(४७) जनाज़ा के साथ रहने का अज्र व सवाब सिर्फ़ मर्दों के लिये है, औरतों के लिये नहीं, इस लिये कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने औरतों को जनाज़ा के साथ जाने से रोका है।

(४८) शरीअ़त में जिन चीज़ों को जनाज़े के साथ ले जाने से मना है, उन को ले जाना जायज़ नहीं, जैसे (१) रोते हुये आवाज़ बुलन्द करना (२) उस के साथ धूनी ले कर चलना।

(४९) जनाज़े के आगे बुलन्द आवाज़ से बयान करना भी बिद्अत् है।

(५०) जनाज़ा तेज़ी से ले जाना चाहिये। इस तरह चला जाये जो दौड़ने से कम हो।

(५१) जनाज़े के आगे-पीछे, दायें-बायें हर तरफ़ चलना जायज़ है, लेकिन शर्त यह है कि क़रीब रहे, हाँ सवार पीछे ही रहे गा।

(५२) जानज़ा के आगे पीछे चलना, यह दोनों सूरतें रसूलुल्लाह

सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम से साबित हैं।

(५३) जनाज़ा के पीछे चलना अफ़्ज़ल है।

(५४) सवार हो कर जाना जायज़ है, मगर यह है कि पीछे चले

(५५) जनाज़ा से वापसी पर सवार हो कर वापस आना बग़ैर कराहत के जायज़ है।

(५६) जनाज़ा को बक्तर-बन्द या मय्यित गाड़ी पर ले जाना और लोगों का गाड़ियों पर सवारहोकरजानाशरीअत के उसूल के ख़िलाफ़ है।

(५७) जनाज़ा को देख कर खड़ा होना मन्सूख़ है। इस की दो सूरतें हैं।

(१) जब जनाज़ा गुज़रे तो बैठे हुये आदमी खड़े हो जायें (२) जब जनाज़ा क़ब्र तक पहुँच कर ज़मीन पर रख दिया जाये (दूनों सूरतें मन्सूख़ हैं।)

(५७) जो भी मय्यित को उठाये उसे वज़ू कर लेना मुनासिब है।

(५८) मुसलमान मय्यित की नमाज़े जानज़ा अदा करना फ़र्ज़ किफ़ाया है।

(५६) इस हुक्म से दो आदमी अलग हैं उन की नमाज़ जनाज़ा अदा करना ज़रुरी नहीं

(१) ना बालिग़ बच्चा (२) शहीद

(६०) इन लोगें की नमाज़ अदा करना सुन्नत से साबित है :

(१) बच्चा (अगर्चे ना तमाम पैदा हुआ हो) (२) शहीद (३) जिस मुसलमान को किसी हद की वजह से क़त्ल किया जाये (४) ऐसा बुरा आदमी जो गुनाहों में डूबा हो, जैसे नमाज़ रोज़ा का तर्क करने वाला, ज़ानी, शराबी वग़ैरह (५) एसा क़र्ज़-दार जो इतना न छोड़े जिस से क़र्ज़ अदा हो सके (६) जिस को बग़ैर जनाज़ा की नमाज़ पढ़े हुये दफ़्न कर दिया हो, या सिर्फ़ चन्द लोगों ने नमाज अदा की हो

(६१) कुफ़्फ़ार, मुनाफ़िक़ की नमाज़े जनाज़ा अदा करना और उन

के लिये मग़्फ़िरत की दुआ़ करना हराम है

(६२) नमाज़ जनाज़ा की जमाअ़त भी इसी तरह ज़रुरी है जैसे दूसरी फ़र्ज़ नमाज़ों की जमाअत ज़रुरी है

(६३) जमाअ़त कम से कम तीन आदमियों से हो सके गी।

(६४) नमाज़ जनाज़ा में जितनी ज़्यादा हाज़िरी हो मय्यित के हक़ में उतना ही बेहतर है

(६५) इमाम के पीछे तीन या इस से ज़्यादा सफ़ें बनायें।

(६६) अगर इमाम के साथ सिर्फ़ एक ही आदमी हो तो वह दीगर नमाज़ों की तरह इमाम के बग़ल में न खड़ा हो, बल्कि इमाम के पीछे खड़ा हो।

(६७) अमीरे वक़्त या उस का नायब, क़रीबी रिश्तेदार से भी ज़्यादा की इमामत का हक़-दार है।

(६८) अगर अमीर या उस का नायब मौजूद न हो तो फिर क़ुरआन को बेहतर पढ़ने वाला ज़्यादा हक़-दार है।

(६९) जब मर्दों और औरतों के जनाज़े इकट्ठे हो जायें तो उन सब पर एक ही बार नमाज़े जनाज़ा पढ़ी जाये गी और मर्दों को इमाम के क़रीब रखा जाये गा, अगर्चे बच्चा ही क्यों न हो।

(७०) हर जनाज़ा के लिये अलग-अलग भी नमाज़ अदा करना जायज़ है

(७१) नमाज़ जनाज़ा मस्जिद में अदा करना भी जायज़ है।

(७२) अफ़्ज़ल यही है कि नमाज़े जनाज़ा मस्जिद से बाहर जनाज़ा गाह में अदा की जाये।

(७३) क़ब्रों के दर्मियान जनाज़ा रख कर नमाज़े जनाज़ा अदा करना जायज़ नहीं।

(७४) नमाज़े जनाज़ा पढ़ाते हुये इमाम मर्द के सर के बराबर और औरत के दर्मियान खड़ा हो गा।

नमाज़े जनाज़ा का तरीक़ा

(७५) नमाज़ जनाज़ा चार या पाँच तक्बीरों से ले कर नौ तक्बीरों तक पढ़ी जा सकती है।

(७६) सिर्फ़ पहली तक्बीर के साथ हाथ उठाये।

(७७) फिर अपने हाथों को सीने पर इस तरह बाधें कि दायाँ हाथ बायें हाथ की हथेली, पहुँचा और कलाई तक आ जाये।

(७८) पहले तक्बीर के साथ सूरः फ़ातिहा और कोई दूसरी सूरः पढ़े।

(७६) नमाज़े जनाज़ा सिर्री तौर पर (दिल में) पढ़े। (ऊँची आवाज़ से नहीं।)

(८०) फिर दूसरी तक्बीर पढ़ कर दरुद शरीफ़ पढ़े।

(८१) फिर बाक़ी तक्बीरें अदा करे और मय्यित के लिये दुआ करे।

(८२) जो दुआयें सुन्नत से साबित हैं वह पढ़ी जायें।

(८३) दुआ, आख़िर तक्बीर और सलाम के दर्मियान पढ़नी भी सुन्नत से साबित है।

(८४) आख़िरी में फ़र्ज़ नमाज़ की तरह दोनों तरफ़ सलाम कहे, पहले दायें तरफ़, फिर बायें तरफ़।

(८५) र्सिफ़ एक सलाम भी काफ़ी है

(८६) जनाज़ा में कुछ आहिस्ता कहना मस्नून है।

(८७) तीन औक़ात में बिला ज़रुरत नमाज़ न पढे.

(१) जब सूरज निकल रहा हो (२) जब सूरज बिल्कुल सीधा हो (३) जब डूबने लगे

दफ़्न के मसाइल

(८८) मय्यित को दफ़्न करना वाजिब है अगर्चे काफ़िर हो।

(८६) मुसलमान को काफ़िर के साथ और काफ़िर को मुसलमाल के साथ दफ़्न न किया जाये। बल्कि मुसलमान को मुसलमान के और काफ़िर को काफ़िर के क़ब्रस्तान में दफ़्न किया जाये।

(६०) मय्यित को क़ब्रस्तान में दफ़्न करना सुन्नत है

(६१) शहीद को शहादत गाह ही में दफ़्न किया जाये गा (न कि क़ब्रस्तान में)

(६२) बिला वजह इन हालतों में दफ़्न करना जायज़ नही

(१) सूरज निकलते वक़्त (२) ठीक दोपहर के वक़्त (३) सूरज डूबते वक़्त (४) रात को

(६३) मजबूरी की हालत में रात को दफ़्न करना दुरुस्त है, अगर्चे चराग़ जलाना पड़े और चराग़ को क़ब्र के अन्दर ले जाना पड़े।

(६४) क़ब्र को गहरा, खुला, अच्छा बनाना ज़रुरी है

(६५) लहद (बग़ली) और शक़ (सन्दूक़ की तरह) दोनों जायज़ है

(६६) ज़रुरत पड़ने पर दो, तीन, चार को एक ही क़ब्र में दफ़्न करना जायज़ है, अल्बत्ता बेहतर को पहले रखा जाये।

(६७) सिर्फ़ मर्द ही मय्यित को क़ब्र में उतारे, अगर्चे मय्यित औरत ही की क्यों न हो।

(६८) मय्यित के क़रीबी रिश्तेदार क़ब्र में उतारने के ज्यादा हक़-दार हैं।

(६९) शौहर अपनी बीवी को खुद ही दफ़्न कर सकता है

(१००) शौहर अपनी बीवी को इस शर्त पर दफ़्न कर सकता है, जब कि उसने गुज़री रात (उससे, या दूसरी बीवी से) हम बिस्तरी न की हो।

(१०१) मय्यित को क़ब्र की पिछली तरफ़ से दाखिल करना सुन्नत है।

(१०२) मय्यित को क़ब्र में दायें करवट लेटाया जाये गा, उस का मुँह क़िब्ला की तरफ़ रहे गा, उस का सर क़िब्ला के दायें तरफ़ और टागें बायें तरफ़ रहें गी।

(१०३) जो आदमी मय्यित को क़ब्र में उतारे वह दुआ पढे

"बिस्मिल्लाहि व अ़ला मिल्लति रसूलिल्लाह"

(१०४) लहद बन्द होने के बाद जो क़ब्र के पास हो वह तीन बार मुट्ठी भर-भर कर मिट्टी डाले।

(१०५) दफ़्न करने के बाद यह काम मस्नून हैं :

(१) क़ब्र को ज़मीन से एक बालिश्त ऊँचा किया जाये, ज़मीन के बराबर न रहे (२) क़ब्र कोहान की तरह बनाई जाये (३) क़ब्र के पास पत्थर या किसी दूसरी चीज़ का निशान रख दिया जाये (४) मय्यित को तल्क़ीन न की जाये, जैसा की आज कल मश्हूर है (इस ताल्लुक़ से हदीसें ज़ईफ़ हैं)

(१०६) दफ़्न के वक़्त मौजूद लोगों को मौत और उस के बाद आने वाले हालात याद दिलाने की ग़रज़ से क़ब्र के पास बैठना जायज़ है।

(१०७) अहम ज़रुरत के तहत मय्यित को क़ब्र से निकालना जायज़ है।

(१०८) किसी के लिये मुनासिब नहीं कि वह मरने से पहले अपनी क़ब्र तैयार कर ले।

तअ़ज़ियत

(१०९) मरने वालों के रिश्ते दारों से ताज़ियत करना ज़रुरी है

(११०) घर वालों से इस तरह ताज़ियत करे जो उन के लिये तसल्ली का बाइस हो और उन्हें ग़म के ज़ाहिर करने से रोक दे

(१११) ताज़ियत तीन ही दिन तक महदूद नहीं, बल्कि जब भी महसूस करें कर सकते हैं।

(११२) दो बातों से बचना चाहिये, अगर्चे यह काम लोग बराबर कर रहे हैं

(१) किसी ख़ास जगह बैठ कर ताज़ियत करना (२) ताज़ियत करने वालों के लिये खाने का इन्तज़ाम करना

(११३) सुन्नत यह है कि मय्यित के घर वालों के लिये उन के रिश्ते दार और पड़ोसी खाने का इन्तज़ाम करें।

(११४) यतीम के सर पर हाथ फेरना और शफ़क़त करना मुस्तहब है।

वह काम जिस से मय्यित को फ़ाइदा पहुँचता है

(११५) मय्यित को दूसरों के कई एक कामों से फ़ाइदा पहुँचता है (१) किसी मुसलमान का मय्यित के हक़ में दुआ करना (२) मय्यित के क़रीबी रिश्ते-दार का मय्यित की तरफ़ से (मन्नत के) रोज़े की क़ज़ा करना (३) क़रीबी रिश्तेदार या किसी दूसरे की तरफ़ से क़र्ज़ अदा कर देना (४) नेक औलाद जो भी अच्छा काम करे गी उस का सवाब उस के माँ-बाप को मिले गा (५) जो कोई अच्छे काम करे, या अपने बाद हमेशा रहने वाले नेक काम छोड़ दे

क़ब्रस्तान की ज़ियारत

(११६) नसीहत और आख़िरत की याद के लिये क़ब्रस्तान की ज़ियारत सुन्नत है।

(११७) औरतों के लिये मर्दों की तरह क़ब्र की ज़ियारत मुस्तहब है।

(११८) औरतों को बार-बार क़ब्रस्तान की ज़ियारत को जाना जायज़ नहीं, ज़्यादा आने जाने से मुम्किन है कि वह शरीअ़त के ख़िलाफ़ करने लगे।

(११९) इब्रत और नसीहत के लिये ग़ैर मुस्लिम के क़ब्र की ज़ियारत जायज़ है।

(१२०) क़ब्रस्तान की ज़ियारत के मौक़े पर क़ुरआन मजीद पढ़ने का सुन्नत से कोई सबूत नहीं है अगर ऐसा करना दुरुस्त होता तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ख़ुद पढ़ते और सहाबा को भी हुक्म देते।

(१२१) मय्यित के हक़ में दुआ के लिये हाथ उठाना जायज़ है।

(१२२) दुआ करने वक़्त क़ब्रों के बजाये काबा की तरफ़ मुँह करें।

(१२३) जब काफ़िर की क़ब्र के पास जाये तो सलाम न करे, और

न ही उस के हक़ में दुआ करे, बल्कि आग की ख़बर दे।

(१२४) मुसलमान की क़ब्रों के दर्मियान जूतों समेत न चले।

(१२५) अगर-बत्ती या इस क़िस्म की दूसरी खुश्बूदार घास या गुलाब के फूल क़ब्र पर रखना जायज़ नहीं।

क़ब्रस्तान में जो काम हराम हैं

(११६) क़ब्र के पास यह काम हराम हैं :

(१) अल्लाह के नाम पर ज़ब्ह करना (२) बाहर की मिट्टी ला कर क़ब्र को ऊँचा करना (३) गच वग़ैरा कर के क़ब्र को लेप करना (४) क़ब्र पर कुछ लिखना (५) क़ब्र पर इमारत बनाना (६) उस के ऊपर बैठना (७) क़ब्र की तरफ़ मुँह कर के नमाज़ पढ़ना (८) क़ब्र के पास नमाज़ अदा करना, अगर्चे रुख़ क़ब्र की तरफ़ न हो। (९) क़ब्रों पर मस्जिदें बनाना (१०) क़ब्रों को मेला-ठेला बनाना (११) सफ़र करके क़ब्रों की ज़ियारत के लिये जाना (१२) क़ब्रों के पास चराग़ जलाना (१३) मुर्दे की हड्डी तोड़ना।

(१२७) काफ़िरों की क़ब्रें उखाड़ना जायज़ है, इस लिये कि उन का कोई एहतराम नहीं।

★★★★★★ समाप्त ★★★★★★